THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182343
UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 82 S48R Accession No. 176

Author शिवराम दास गुप्त

Title राधा-माधव

This book should be returned on or before the date last marked below.

राधा-माधव

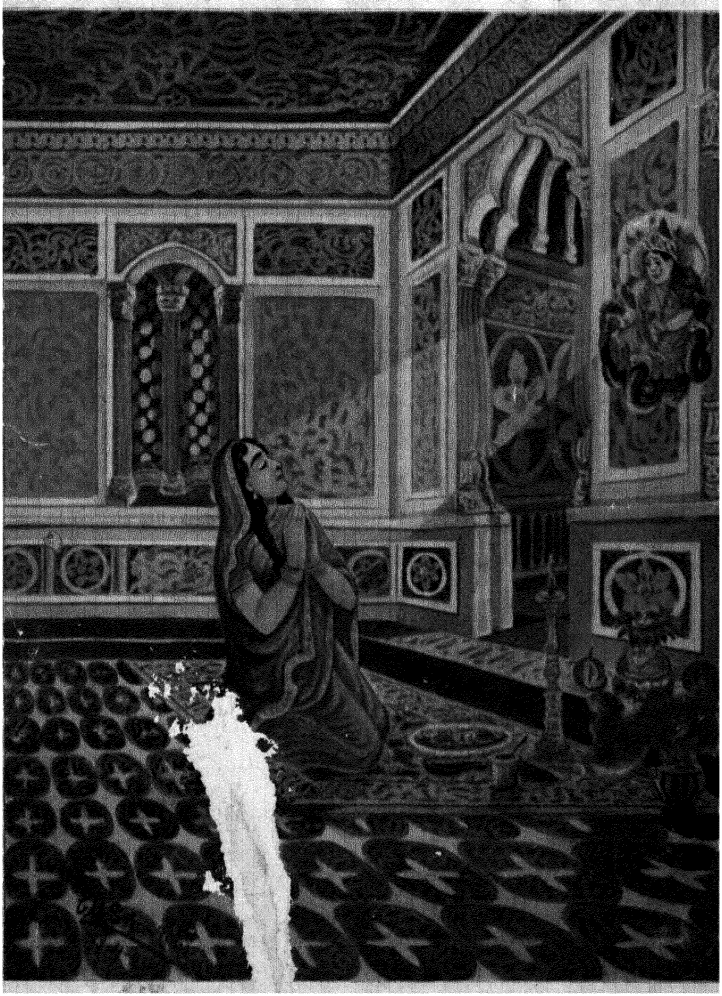

ओम् शिवाय नमः

राधा-माधव

एक

शिक्षाप्रद पौराणिक नाटक ।

लेखक—

एक नाटक-प्रेमी

प्रकाशक—

उपन्यास-बहार-आफिस, काशी,

बनारस ।

प्रकाशक ने सर्वाधिकार सुरक्षित रक्खा है ।

प्रथमवार] [मूल्य ।॥)

नाटक माला सं० ५५

सम्पादक

शिवरामदास गुप्त

काशी, बनारस

Checked 1965

Checked 1969

मुद्रक

श्रीगुरुराम विश्वकर्मा,

सरस्वती प्रेस, काशी

श्री

राधा-माधव

नाटक

रंगमंच

(सबका ईश्वर-स्तुति करना)

सब—

जय माधव मधुसूदन स्वामी,
जय नटवर हरि अन्तरयामी ।
निशिदिन पल छिन ध्यान तुम्हारो,
जपें सकल नर-नारि जगत में ॥ जय०—
निशिदिन भक्ति जो करे, प्रेम-पुरित मनलाय ।
दुख सागर से पार हो, मुक्ति धाम पदपाय ॥

(गाते २ सब का जाना)

अनयराज का महल

(अनयराज की पत्नी राधा का कृष्ण की बड़ाई करते आना)

राधा—अहा हा ! कृष्ण ! जगत्पति कृष्ण ! इस नाम में कितनी शक्ति, है कितना बल है कि जिसके उच्चारण करते ही हृदय की प्रत्येक

तंत्री से स्वर्गीय अनहदनाद का मधुर आलाप सुनाई देता है। इस मधुर नाम का आकर्षण सारी अपवित्रता को दूर कर मन को हर लेता है। इसी नाम के प्रताप से ही मनुष्य मोक्षपद पाता है। और इसका गुणगान जो नित्य करता है, वह अन्त समय भवजाल के बंधनों से मुक्त हो जाता है। इन्हीं कृष्णभगवान की भक्ति और ज्ञान से बालक ने गर्भ के कठोर नरकवास से छुटकारा पाया। इन्हीं की पवित्र प्रेम-भक्ति ने 'कर्तव्य क्या है' इसका असली तत्व समझाया। अस्तु भगवन्! तुम्हारे चरणों में दासी बारम्बार नमन करती है।

(कामिनी का प्रवेश)

कामि०—बस करो भाभी! बस करो! उस चाण्डाल का नाम ले २ कर मेरे हृदय में आघात न पहुंचाओ। जिस दुष्ट के फेर में पड़ कर मेरे मूर्ख और पागल पति ने मेरा सोने का संसार मिट्टी में मिला दिया है उस अधम का अपवित्र नाम लेकर मुझे रातदिन न कलपाओ। पति के होते हुए भी जो अनाथा, दीनहीना हो गई है उस नीच का कर्णकटु नाम उसके कानों को न सुनाओ।

राधा—हैं! यह तुम क्या कहती हो बहिन! जिसके नाम लेने से महा अधम से अधम पातकी भी तर जाता है। जिसके केवल नाम उच्चारण करते ही महानीच से नीच मनुष्य भी मोक्षपद पाता है, उस नाम से तुम्हें इतनी अश्रद्धा क्यों है? यह कुछ समझ में नहीं आता है। जमाईजी को लोग भले ही पागल कहें, आपको भी उनके कृत्य भ्रष्ट ज्ञात हों, परन्तु मेरी क्षुद्र बुद्धि में तो यही आता है कि वह अवश्य कोई तपभ्रष्ट महात्मा हैं—जिन्होंने हमारे तुम्हारे ऐसे पातकियों का उद्धार करने के लिये संसार में अवतार लिया है। आप उनकी पूर्ण रूप से सेवा कीजिए। प्रेम भाव से माधव की भक्ति कीजिए, आपको सुख शान्ति अवश्य

प्राप्त होगी। वह निराकाररूप में छिपा हुआ साकार मूर्ति परमात्मा आपका कष्ट अवश्य दूर करेगा।

गाना

जब प्राण निकले तन से, यमुनाजी का निकट हो॥
आओ कृष्ण कन्हैया प्यारे जाऊँ तो पै वारी॥
जब से देखो तोरी प्यारी सुरतिया।
निशि दिन पल छिन चैन न आवे॥ कृष्ण०—
कृष्णनाम सब पाप नशावे, भवबंधन से पार लगावे।
निशि दिन हमारे मुख पै, श्रीकृष्ण, कृष्ण रट हो।

कामिनी—ओह! दुष्टा चाण्डालिन! मेरे संतप्त हृदय पर नमक छिड़कती है? मुझे चिढ़ाने के लिये और भी बार २ वाग्-बाणों का प्रहार करती है? तेरा पाणिग्रहण भैया से न हो कर यदि उस पागल से होता तो तू इस प्रकार ब्रह्मज्ञान का ढोंग दिखा कर भक्ति-प्रेम का दम कदापि न भरती! मूर्ख को बुद्धिमान कह-कर मुझे मूर्खा बनानेवाली, माधव की शक्ति का और सेवा का उपदेश सुनाने वाली! क्या तुझे लज्जा नहीं आती? जिस माधव के नाम से मेरे सारे शरीर में विकट दावानल भड़क उठता है, उसी कपटी छली का नित्य अपने मुँह से नाम उच्चारण करती है, भय संकोच को त्याग कर जी जान से उस पर मरती है।

सिखाती है मुझे उस नारकी की भक्ति पूजा जप।
मेरा अपमान करने के लिये ही तू तूली है अब॥

(अनयराज का आना)

अनय०—हैं २ बहिन, यह तुम क्या कह रही हो? ऐसे अनु-चित शब्द उच्चारण करने से हृदय को महान क्लेश होता है। व्यर्थ इक निरपराध व्यक्ति को कलंक न लगाओ। कुछ सोचो विचार करो, व्यर्थ आपस में कलह मचाकर बातों को न बढ़ाओ।

कामि०—अहा ! पत्नी के गुलाम ! आइये ! २ पत्नी के पक्षपाती बनकर उसकी हाँ में हाँ मिलाइये। तुम्हारी स्त्री मेरा अपमान करे और तुम चुपचाप देखा करो, फिर भी मुँह से कुछ न बोलो ? ओह ! इतना अपमान। बस अब सहा नहीं जाता। इसघर का अन्न जल ग्रहण करना भी मेरे लिये महापाप है। जहाँ मान की हानि हो वहाँ रहना भी घोर संताप है।

(क्रोध में जाना)

अनय०—ओ हो ! कैसा उग्र स्वभाव है। कामिनी ! कामिनी ! इस तरह क्रोध में बावली न हो ! राधा की शान्त और आनन्द-मयी वृत्ति को देख ! और अपने इस उग्र स्वभाव को त्याग। राधे ! व्यर्थ इस क्रुद्धा सिंहिनी को अपने पास बुलवाकर नित्य उसके कठोर वचन का प्रहार क्यों सह रही हो ? (हाथ पकड़कर) प्रिये ! मेरी उत्तेजित मनोवृत्तियों को पल भर में शान्त करने की अद्भुत सामर्थ्य तुम्हारी इस मधुर वाणी में भरी है। तुम्हारी मोहिनीमूर्त्ति का विद्युत् आकर्षण मेरे मुग्ध मन को बरबस अपनी ओर खींच लेती है। मुझे ज्ञात होता है तुम अवश्य कोई देवी हो।

करूँ निशिदिन तुम्हारी प्रेम भक्ति से चरण पूजा।
तुम्हारे ध्यान के अतिरिक्त नहीं मन में कोई दूजा॥

राधा—हैं २ नाथ ! यह आप क्या कहते हैं ? जो एक तुच्छ चरणदासी आपके पदकमल के रज का भी सामना नहीं कर सकती, उसे ऐसी २ उपमायें देकर क्यों व्यर्थ लज्जित बनाते हैं ?

ये है सौभाग्य मेरा जो सदा पतिप्रेम पाती हूँ।
उदारता आपकी है जो प्रभु गुण गान गाती हूँ॥

अनय०—आह ! प्रिये ! तुम्हारे इन्हीं मधुर संभाषण और प्रेमालाप ने ही मुझे प्रेम-बंधन में बांध लिया है।

(मुरली का शब्द सुनाई देता है)

राधा—नाथ ! सुनिये, सुनिये, वह मुरली की कर्ण मधुर ध्वनि सुनाई दे रही है। आहा ! इसकी हरेक स्वर-लहरी हृदय के धम भाव को जगा देती है। इसकी मधुर तान युक्त कोमल आलाप मन के सारे पाप ताप को हर लेती है। अहा ! माधव २ !!

(ध्यानस्थ हो जाना)

अनय०—राधा ! राधा ! (राधा को अचल देखकर) हैं, यह तो ध्यानस्थ हो गई। किन्तु अहाहा ! इस ध्यानावस्था में भी इसके मुख कमल पर मधुर हास्य रेखाओं का कैसा सुन्दर विकाश हो रहा है। मानो इस सुन्दर ज्योति से पूर्ण चन्द्रमा का प्रकाश हो रहा है। न मालूम क्यों इसके इस भाव को देखते ही मेरे हृदय में पूज्य भावों का उदय हो रहा है। प्यारी। हृदयेश्वरी ! उठो २ ! जागृत हो जाओ !

राधा०—(जागकर) प्रियतम ! क्या वह कर्णमधुर ध्वनि आपने नहीं सुनी ?

अनय०—आह प्रिये !

किसको सुनते-क्या ये दोनों चंद मेरे कर्ण कुहर।
जिधर तुम थी उधर मन था जिधर मन था ये उधर ॥

तुम्हारे इस विश्वविमोहन सुन्दर मुख कमल से निकलने वाली कर्ण मधुर ध्वनि के सिवाय मुझे और कुछ भी सुनाई नहीं देता। तुम्हारी इस मनोहारिणी मूर्ति के अतिरिक्त दूसरा कोई भी यहाँ दिखाई नहीं देता। जब तुम नींद में आँखें बन्द कर लेती हो तो चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा पाता हूँ। और जब नेत्र खोलती हो तो दिव्य प्रकाश से आनन्द मग्न हो जाता हूँ। तुम्हारी सुकुमार कोमल बाहों का परिवेष्ठन मेरे गले में हो और तुम स्वर्ग की सुन्दरियों को लजाती हुई अधर से अधर मिला कर मुझे अपने अधरामृत का पान कराओ, इसके लिये मेरे प्यासे होंठ फड़क रहे

हैं। तुम्हें अपने प्रेमालिंगन में बाँध कर हृदय को शीतल करूँ इस लिये ये पापी प्राण अकुला रहे हैं। आओ चलो भीतर चलें।

राधा—ठहरिये२ प्राणनाथ!—मैंने एक अद्भुत चमत्कार देखा।

अनय०—क्या देखा?

राधा—एक शान्त गम्भीर महा सागर में सुन्दर पुष्पों से सजी हुई नौका पर बैठ कर हम लोग आनन्द-विहार कर रहे हैं। वायु की कोमल लहरियों से हमारी वह प्रेम नौका हर्षोत्फुल्ल हो धीरे २ हिलोरें ले रही है। इतने में एक महा प्रलयकारी तूफानी हवा से, क्रोध में गरजती, उछलती हुई समुद्र की लहरों में गर्जन तर्जन आरंभ हो गया। उसी समय हमारी वह नौका उलट पलट कर समुद्र गर्भ में समाने लगी। आप मुझे गोद में लेकर समुद्र में कूद पड़े और आपकी प्रबल बाहुओं ने उन लहरों से युद्ध करना आरंभ कर दिया। पलक मारने में आप अदृश्य हो गये। और उन प्रबल तूफानी लहरों से टकराती हुई मेरे मुख से आर्तनाद निकल पड़ा—"हे माधव, कृष्णपति, अबला का इस दुख सागर से उद्धार करो बचाओ-बचाओ!" उसी समय न मालूम कहाँ से मुरली का मंजुल स्वर सुनाई दिया। महासागर ने अपनी भीषणता छोड़ शान्त भाव धारण कर लिया। आप मेरे समीप पुनः दिखाई दिये और मैं आपके प्रेमालिंगन में जकड़ गयी। (दोनों आलिंगन करते हैं मुरली का शब्द होता है)

अनय०—वह देखो २ राधा! तुम्हारी और मेरी प्रेम पूर्ति के लिये वही मंजुल स्वर पुनः सुनाई दे रहा है। हृदय में संचित हमारे प्रेम भाव को अपनी कोमल झंकार से बरबस जगा रहा है। मनोहारिणी प्यारी सुभामिनी! इस मुरली के कोमल स्वर के साथ २ तुम भी अपना प्रिय मधुर भाषण आरम्भ करो। आओ२ हृदयसे लग जाओ।

राधा—अहा ! मुरली ! मरली ! तू धन्य है ! तेरा ही जीवन सार्थक है। तू सदा हो अपने प्रियतम के अधरानन पर विराजती है। (उठ कर जाने लगती है)

अनय०—हैं प्रिये ! चली कहाँ ?

राधा—वहाँ, जहाँ मेरे माधव विश्व के पति विराजते हैं। अखिल ब्रह्माण्ड के प्राणी जिसका नित्य गुण गाते हैं। वहां, जहाँ नन्द के लाल बालगोपाल गोपियों के साथ गऊ चराते हैं। नित्य माखन चुरा २ कर प्रेम का भोग लगाते हैं। जिसने अकासुर बकासुर आदि पापियों के मारने के लिये कृष्णरूप धारा, अनेक राक्षसों को संहार कर भक्तों का उबारा।

अनय०—तू बावली हो गयी है। मुरली के मधुर स्वर ने तुझ पर जादू कर दिया है। तेरे मन को हर लिया है।

राधा -नहीं प्राणनाथ ! मैं बावली नहीं सावधान हूँ। स्वप्न द्वारा मेरे हृदय पर भावी संकट की छाप पड़ी है। माधव के चरण कमलों के सिवाय हमारा उद्धार कौन करेगा। चलिये, पहले उनकी पूजा कीजिए, विलम्ब, न लगाइये आइये शीघ्र आइये।

अनय०—नहीं, इस समय बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है। भीतर ही चल कर माधव का गुन गायें, प्रेम वार्ता से मन बहलायें।

राधा—माधव की प्रेमभक्ति की सुदृढ़ नाव पर ही हमारा प्रेम बंधन बँधा है। उससे इतना कृतघ्न होना न चाहिए। वृथा हठ न ठानिये -मेरा कहना मानिये -चलिये शीघ्र चलिये। क्या आप न चलेंगे ? अच्छा तो मैं अकेली ही जाऊँगी। उस मुरली मनोहर को पूजा के लिये अवश्य जाऊँगी।

अनय०—आह ! जिस मुरली की ध्वनि ने मुझे आनन्द की आशा दिखलाई, वही ध्वनि मेरे शरीर में क्रोधाग्नि सुलगा रही है। राधे ! सावधान ! इस समय तू नहीं जा सकती।

राधा – आपकी आज्ञा मुझे शिरोधार्य्य है। किन्तु क्या करूँ विवश हूँ। माधव की मुरली का जादू मुझे बरबस अपनी ओर खींच रहा है। अब मैं नहीं रुक सकती। क्षमा कीजिए। मेरी इस ढिठाई पर ध्यान न दीजिए (पुनः मुरली की ध्वनि आती है) छोड़िये २। हैं, क्या नहीं छोड़ते ? देखिए मैं छूटगई।

(हाथ छुड़ा कर भाग जाती है)

अनय०—हैं ! चली गयी, राधा मेरे बाहु बंधन से छूट कर चली गयी ? ओह ! एक अबला में मेरे ऐसे दृढ़ बाहु-पाश के छुड़ाने की शक्ति कहां से आयी ? परन्तु इन कृतघ्न भुजाओं ने उसे जाने क्यों दिया ? आह ! अनय ! तेरी महा बलवान राक्षसों को एकही बार में कुचल डालनेवाला सामर्थ्य, बड़े २ योद्धाओं को एक ही धक्के में भूतलशायी करनेवाली शक्ति, ऐरावत तुल्य मत्त हाथी की पूंछ पकड़ कर रोकने वाला अथाह बल, वह तुम्हारा अजेय पराक्रम ये सब क्या एक कोमलांगी सुन्दरी के कोमल स्पर्श से नष्ट हो गये ? राधा ! पति सेवा से बढ़ कर तुमने माधव की सेवा समझी ? पति आज्ञा उल्लंघन कर मुरली की तान पर बलिहार हुई। इससे क्या तुम्हें मोक्षपद मिल जायेगा ?

(कामिनी आती है)

कामिनी—क्यों अब समझ में आया ? मेरे रातदिन झगड़ा करने का रहस्य ज्ञात हुआ ?

अनय०—नहीं मैं कुछ नहीं समझा। राधे ने क्यों मुझसे ऐसा निष्ठुर व्यवहार किया, इसका तात्पर्य मेरी समझ में कुछ भी न आया।

कामिनी—ठीक है, समझ में कहाँ से आये। उसकी मोहिनी मूर्ति ने तुम्हारी बुद्धि बिल्कुल मन्द कर दी है। उसके रूप की ज्योति ने तुम्हारी दृष्टि अंधी कर दी है। परन्तु मुझे क्या ? मेरा सुनता कौन है ? किन्तु नहीं। मुझसे यह अत्याचार देखा नहीं

जाता। कुल में कलंक लग रहा है, यह देख कर भी मुझसे चुप रहा नहीं जाता।

अनय०—हैं! क्या कहा? कुल में कलंक? साफ २ कहो, मैं नहीं समझा।

कामि०—समझोगे कैसे? प्रत्यक्ष तुम्हारी धर्मपत्नी एक पर-पुरुष की बड़ाई तुम्हारे सामने करे। तुम्हारे ही सामने उससे हँसे खेले, उसके प्रेम का दम भरे। तुम्हें झटक कर उसके पास चली जाय, फिर भी तुम्हें इसका रहस्य कुछ भी समझ में न आये? आश्चर्य! महा आश्चर्य!!

अनय०—(स्वगत) ओह! इसका प्रत्येक शब्द मेरे हृदय में शूल पैदा कर रहा है (प्रगट) इसका प्रमाण?

कामि०—प्रमाण चाहते हो? तुम्हारी प्रेमिका राधा और प्रेमी माधव किस तरह प्रेम के गुलछर्रे उड़ा रहे हैं, यदि अपनी आँखों से देखना चाहते हो तो जाओ, कुंज-वन में जाओ और अपने अन्धे प्रेम अंध-विश्वास का प्रतिफल, उसकी असली सूरत क्या है इसे भलीभाँति देख आओ

अनय०—बस २ बहिन, कामिनी! अपनी जिह्वा सँभाल! इन जहर भरी फुफकारों से मेरे कानों में विष न ढाल। राधा असती है, व्यभिचारिणी है, इसपर मैं स्वप्न में भी विश्वास नहीं कर सकता। माधव पर उसकी विलक्षण भक्ति है इसी हेतु वह उनकी आराधना करने गयी है। (कुछ सोचकर) किन्तु नहीं, मैं जाऊंगा, अवश्य जाऊँगा, इसमें कहां तक विष भरा हुआ है, इसका तत्व अवश्य समझूँगा।

विषैले इन बचन बाणों ने दिल मेरा खसोटा है।
तपा देखूँगा ये सोना खरा है, या कि खोटा है॥

(जाना)

लम्बोदर का मठ

(लम्बोदर आता है)

लम्बो०—धत्तेरा मुँह हो काला। इस बेदुम के गदहे ने तो मेरा नाकों में दम कर डाला। अरे लछमनवा! लछमनवा, अरे ओ लछमनवा! अरे यह तो सुनता ही नहीं चिल्लाते २ मेरा गला बैठ गया, किन्तु इसके कानोंमें जूँ तक नहीं रेंगती? अरे उठ, जल्दी उठ प्रात काल हो गया।

(लछमन आता है)

क्योंरे लछमनवा! तुझे मेरा पुकारना चिल्लाना भी सुनाई नहीं पड़ता?

लछमन—क्या करूँ गुरुजी! इतने सबेरे तो मुझसे नहीं उठा जाता। नित्य दुपहर के समय आपको भोजन बना कर दूँ। रात में अफीम खिलाऊँ, अर्द्ध रात्रि को दूध पिलाऊँ, फिर प्रातः काल आपके स्नान के लिये धोती गमछा उठाऊँ। बस, ऐसी शिष्य वृत्ति से तो मैं बाज आया। न कुछ फुर्सत मिले न आराम, जब देखो तब अँगुली थाम!

लम्बो०—तो फिर पहले ही क्यों नहीं वैसा कहा कि मुझसे यह सब धंधा न हो सकेगा? कई बार मैंने तुझसे कहा कि माधव की मुरली बजने के पहले ही शंख बजाना चाहिए। किन्तु तुझसे इतना सा काम भी नहीं होता?

लछमन—आपने आज्ञा तो दी, ठीक है। किन्तु मेरा शंख ही खो गया। क्या खाली हाथों से शंख बजाऊँ, या गला दाब कर मर जाऊँ ?

लम्बो०—बस, जब तो तू पूरा लपोड़शंख ही है। अरे मैं कब का उठा हूँ। जमुना जी स्नान कर आया, पाठ-पूजा से भी छुट्टी पायी; शिष्य-मंडली की बाट देखते २ उकता गया और इस आशा में था, कि तू शंख बजायेगा, इतने में मुझे नींद आ गयी। किन्तु फिर भी जागने पर शंख का पता नहीं !

लछमन—क्या करूँ गुरु जी ! आपकी नाक जोर २ से बजती थी उसी घरघराहट में मुझे मुरली की धुन सुनाई नहीं दी। अब बताइये इसका क्या उपाय हो ? या तो आप नाक बजाना बंद कर दें। या नाक में चिथड़ा ठूँस कर सोया करें।

लम्बो०—अबे उल्लू के पट्ठे ! नाक में चिथड़ा ठूँस कर सोने से क्या आदमी सो सकता है। (सामने देख कर) अच्छा २ देख सँभल जा। सामने से फुदकती हुई चिड़ियें आ रही हैं, उनकी किलकिलाहट सुनाई पड़ती है। देखना जाने न पावे, दिखा अपनी सफाई का हाथ, लगा मेरा पढ़ाया हुआ घात। (बहुत सी गोपियाँ सिर पर दूध की मटकियाँ लेकर आती हैं)

लछ०—(चिल्ला कर) अरी ओ, ठहरो २ कहाँ जाती हो, इधर आओ। उत्तम गुरु उपदेश, स्वर्गीय सुख का लाभ, और तात्कालिक मुक्ति पाना हो तो हमारे गुरु जी के पास चली आओ ? (गुरु से) क्यों गुरु जी ! कैसी कही ?

गुरु०—अच्छी कही।

१ गोपी—बहिन ! देखो न ! जिस प्रकार बाजार में जाते समय दूकानदार चिल्लाते हैं, उसी प्रकार यह निगोड़ा भी चिल्ला रहा है। सारा महल्ला सर पर उठा रहा है।

२ गोपी—जानेदो बहन, चलो, यहाँ ठहरना अच्छा नहीं। राधा कुंजबन पहुँच गई होगी।

लछ०—देखो २ सावधान! आगे न जाना, नहीं तो फंस जाओगी और यहां पर एकदम नग्न होजाओगी। भव-जाल से छूट जाओगी। जरा देखो तो सही, हमारे गुरु महाराज की देह कितनी विशाल है। आप जब चलने लगते हैं तो धरती दब जाती है। हाँ गुरुजी! जरा चलकर तो बताइये।

२ गोपी—वाह बलिहारी है तुम्हारे गुरुमहाराज की।

लम्बो०—अरे लछमन! पहले उन्हें मेरी सम्पूर्ण प्रशंसा तो सुना।

लछमन—अच्छा सुनो, हमारे गुरुजी गर्व रहित हैं। पक्षपात रहित होकर सबको समान उपदेश देते हैं। छोटे बड़े, अमीर गरीब, कुरूप सुरूप ब्राह्मण शूद्र सबको समान भाव से देखते हैं। इनमें भेदभाव का लेश नहीं।

१ गोपी—ओहो, यह बात! तब तो बड़े पहुँचे हुए साधु महाराज हैं।

लम्बो०—निस्संदेह मैं वैसाही हूँ। उस माधव की तरह उच्छृङ्खल नहीं, मैं गंभीर हाथी के समान हूँ।

गोपी—हाथी तो नहीं, किन्तु गदहे के समान अवश्य हैं।

लछमन—अच्छा तनिक इनकी पोशाक पर तो दृष्टि दौड़ाइये, कितनी सादी है और इनके शरीर पर कैसी शोभा दिखा रही है।

१ गोपी—मानो बुड्ढे बैलपर कारचोपीदार दुशाला पड़ा है।

लछमन—जरा महाराज की दाढ़ी और जटा को तो देखिये, विस्तीर्ण वट वृक्ष के समान लटकती हुई कितनी शोभा दे रही है।

३ गो०—जैसे घोड़े की पूँछ।

लछ०—अब महाराज के नाक की भी बड़ाई सुन लीजिये।

एक समय महाराज आनन्द में पड़े हुए खुर्राटे ले रहे थे, कि इतने में एक बड़ा सा हाथी, नाक को गुफा समझ कर उसमें जाने लगा। किन्तु महाराज के साँस खींचते ही उसके दोनों पांव अटक गये! विचारा जोर २ से चिल्लाने लगा। महाराज की दुहाई मचाने लगा।

१ गोपी—यथार्थ में गजेन्द्रमोक्ष का समय आगया था।

लछमन—किन्तु, हाथी जब चिल्लाते २ थक गया, तो मारे गुस्से से हाथी ने जो दूसरी लात फटकारी कि महाराज की नाक फट गयी और उसने छुटकारा पाया।

लम्बो०—अरे मूर्ख! तू यह सब क्या बक रहा है। मेरी बेइज्जती कर रहा है?

लछमन—गुरुजी! मैं तो आपकी प्रशंसा में अंग प्रत्यंगों की मीमांसा कर रहा हूँ और आप नाराज हुए जाते हैं।

लम्बोदर—अच्छा २ अधिक बातें न बना। चांडाल! मेरी प्रशंसा कर रहा है या अप्रतिष्ठा का बादल बरसा रहा है। बस छीन ले इनसे दूध की मटकी।

लछ०—जो आज्ञा (गोपियों से) देखो जी तुम सब सीधी तरह से दूध और दही की मटकी श्री महाराज के चरणों पर चढ़ाओ। और फिर सीधा मोक्ष का द्वार खुला हुआ पाओ।

गोपियाँ—सावधान! चाण्डाल! यदि हाथ बढ़ायेगा, तो ऐसा थप्पड़ खायेगा कि छठी का दूध याद आजायगा।

(थप्पड़ खींच कर मारती हैं और सब चली जाती हैं)

लछमन—गुरुजी! यह तो बड़े बेभाव की पड़ी।

लम्बो०—अरे बेटे! जब संसार में कोई सत्कर्म करने पर उतारू होता है तो उसके बीच ऐसीही अनेकों बाधायें आ पड़ती हैं। यह तो प्रथम चरण है।

लछम०—तो दूसरे चरण में तो प्राण ही खोना होगा ?

लम्बो०—यथार्थ बात है। धर्म कर्म पर बलिदान होना पड़ेगा तब कहीं मार्ग साफ होगा। फिर अपना काम सिद्ध होगा, जगत का कल्याण होगा। क्यों बेटा ! समझ में आया मेरी बातों का क्या सार है ?

लछम०—बस गुरुजी। ऐसे सत्कर्मों को मेरा दूरही से नमस्कार है।

लम्बो०—अरे मूर्ख ! तू क्या जाने कि गदहे की सींग किधर होती है। अभी तू बालक है, अज्ञान है। आ, मेरे पास आ। मैं तुझे सब समझाता हूँ। मोक्ष का असली मार्ग क्या है, स्पष्ट समझाता हूँ।

गाना।

दोनों—सिर पर लम्बे २ बाल, गले में तुलसी माला डाल।

लछ०—लम्बी टीका कर करताल; मधुरी बानी दिखा के चाल।

गु०—दिखा के भक्ति का अब बाना।

चुके न अपना कभी निशाना।

ले कन्धों में झोली डाल हलुवा पूड़ी चाभो माल। सिर०—

(गाते २ दोनों का जाना)

कुञ्जबन

(माधव खड़े होकर मुरली बजा रहे हैं)

माधव—हैं, आज यह मुरली निरालेही स्वर में क्यों आलाप ले रही है ? शान्तिरस का त्याग करके आज यह भयानकरस में क्यों विलाप कर रही है? मुरली! प्यारी मुरली! तुम्हारी ध्वनि पर मेरे भक्त लोग बलिहार हो जाते हैं। तुम्हीं इस भवसागर से पार करने का एकमात्र सहारा हो, इस लिये सदा तुम्हारा ही नाम गाते हैं। तो क्या आज तुम अपने स्वर में वह मिठास न लाओगी? अपनी मधुर आलाप से मेरे भक्तों को आज तृप्त न बनाओगी? हैं! आज तुम इतनी बिकल क्यों हो ? किसी के आने की आशा है, या मुझ पर रुष्ट हो गयी ? (राधा आकर माधव के चरण छूती है) कौन राधा! आओ २! तुम इस मुरली को मनाओ। आज यह मुझसे रूठी जा रही है। मेरी इतनी विनती इतनी प्रार्थना पर भी मुझे अपनी असली तान नहीं सुना रही है।

राधा—बहिन मुरली! आज तुम्हें क्या हो गया है ? मैं माधव की भक्तिन हूँ। तुम उनकी वाणी हो—उनकी सहचारिणी हो, और इस राधा की प्राणदात्रि हो! बैठ जाओ! माधव के मुख-सिंहासन पर विराजमान हो जाओ और अपनी मधुर आलापों से इस कुंजबन को मुखरित कर प्रफुल्लित बनाओ। माधव! कृपया प्यारी मुरली का चुम्बन लीजिए और इसके क्रोध को शान्त कीजिए।

अरी प्यारी बहन मुरली ! ये ऐसी क्यों रुठी हो तुम।
ये किस पर रोष है जिससे विकल मन हो पड़ी हो तुम॥
सदाही अपने प्रीतम के कमल मुखपर तुम वसती हो।
सुरीली तान से अपनी जगत को वश में करती हो॥
सुनादो फिर वही सुन्दर रसीली तान वंशी में।
विकल मन मुग्ध हो जाये कि सुनकर गान वंशी में॥

माधव—राधे ! इस मुरली के व्योहार पर जरा ध्यान दो ! तुम मेरे पास केवल भक्तिभाव से आती हो, मुझसे प्रेम से बोलती हो, मेरे विचारों को एकाग्रता से सुनती हो, परन्तु इस मुरली को यह भी सहन नहीं होता। यह तो एक हाथ की निर्जीव लकड़ी है। किन्तु साढ़े तीन हाथ के सजीव मनुष्यों को भी मेरा और तुम्हारा बोलना बैठना आश्चर्य जनक प्रतीत होता है। उनकी समझ से मैं अधोगति को जा रहा हूँ। मैं एक राजपुत्र हूँ। राज रक्षण की शिक्षा छोड़ गाय और बछियों का संरक्षण कर रहा हूँ। क्या मुझे कोई अच्छा कह रहा है? मेरे आसपास जो तुम गोप गोपियों के झुण्ड आते हैं। इसलिये लोग मुझे गालियाँ देते हैं, भला बुरा कहते हैं।

राधा—जिसको पांडु रोग होता है उसको सारा जगत पीत-वर्ण ही दिखाई देता है, जो स्वयं बुरे होते हैं वे दूसरों को भी बुरा समझते हैं। किन्तु उनकी गालियाँ, उनके शाप आपको पुष्पवृष्टि के समान होंगे। आप की निन्दा उन्हीं को नीचे गिरायेगी। अहा ! मानव जाति कितनी नीच है। यह अज्ञान गाय बैल माधव का मनोभाव समझ कर उनके आसपास खेलते कूदते हैं, उनको अपने दुःख सुख की बातें सुनाते हैं, परन्तु हम आज्ञान के घमण्ड में इन प्रत्यक्ष परमेश्वर से द्रोह करते हैं। बात २ में निरादर करते हैं।

कौन वस्तु है खरी और कौन खोटी है यहाँ।
ये परखने की किसी को ज्ञानशक्ती है कहाँ॥
अंधी आँखें अंधा मन औ अंधा सब संसार।
अंधे को अंधा ही सूझे करे सदा वह नीच विचार॥

माधव—राधे! मैं ईश्वर नहीं, तुम्हारे ही समान एक जीव-धारी मनुष्य प्राणी हूँ। यदि मैं ईश्वर हूं, तो तुम भी ईश्वर हो। कारण प्रत्येक आत्मा में ईश्वरीय अंश विराजमान है, सारे जगत् में उसकी ही सत्ता दिव्य रूप से प्रकाशमान है। तुमने अपने पति की आज्ञा का उल्लंघन किया और मेरी प्रेमभक्ति पर मन दिया यह तुम्हारा पागलपन है। कारण, पति-सेवा ही स्त्रियों का एक मात्र सार धन है।

कहाँ ईश्वर कहाँ मैं तुच्छ ग्वाला एक अनारी हूँ।
जो तुम हो मैं वही हूँ बस, फकत एक प्राणधारी हूँ॥

राधा—पागलपन ही सही, मुझे उसी में आनन्द है—सुख है। उसी पागलपन की अवस्था में मैं सदा लवलीन रहूँ, पति की प्रीति और आपकी भक्ति में सदा तल्लीन रहूँ। यही मेरी आन्तरिक इच्छा है। देखिये प्रभो! मेरे प्राणनाथ पर क्रोधित न होना। आपके चरण कमलों के दर्शनार्थ वे नहीं आये, इसलिये उनपर रुष्ट न होना। मैं उनके लिये आँचल फैलाकर दया की भीख माँगती हूँ।

मेरे स्वामी के मन में भी तुम्हारी प्रेम भक्ती हो।
तुम्हें ईश्वर समझने की उन्हें बस ज्ञान-शक्ती हो॥
दया की दृष्टि हो उनपर तो बेड़ा पार हो जाये।
हमारा इस जगत् बंधन से बस उद्धार हो जाये॥

माधव—राधे! राधे!! सचमुच तुम बावली हो गई हो। ऐसे सुगंधित सुमन-सौरभ-संयुक्त मंद २ मलय समीरण की क्रीड़ा से

उन्मत्त प्रभात काल के समय पति की सुख-शय्या और कोमल बाहु का परिवेष्टन त्याग कर अपनी आन्तरिक प्रेमभक्ति को व्यक्त करने के लिये तुम मेरे पास दौड़ कर चली आई यह मेरा सत्य अनुमान है, किन्तु तुम्हारे इस व्यवहार को संसार किस दृष्टि से देखेगा इसका भी कुछ ध्यान है ?

राधा—संसार की दृष्टि की मैं जिम्मेवार नहीं। लोग मुझे जिस दृष्टि से देखें, भला कहें या बुरा कहें मुझे उसकी चिन्ता नहीं। मन की पसंद का फैसला आंख करती है, किन्तु आँख की पसंद का फैसला संसार में कोई नहीं कर सकता।

(सब गोपियां आती हैं और माधव को घेर कर खड़ी हो जाती हैं)

१ गोपी—माधव ! आज हम लोग कभी के आ जातीं, किन्तु रास्ते में वह निगोड़ा लम्बी दाढ़ी वाला लम्बोदर मिल गया जिसके कारण कुछ देर हो गई। क्षमा करना।

२ गोपी—सचमुच राधा ! आज वह मूआ निगोड़ा मेरा हाथ पकड़ कर मुझसे धींगामस्ती करने को तय्यार हुआ था।

राधा—माधव ! तुम्हारे दर्शन को आने वाली बिचारी अबलाओं पर सरासर यह अत्याचार—उनका यह अपमान ! कितने दुख की बात है !

(कुञ्जवन में चारो ओर से आग भभक उठती है। गोपियां चिल्लाने लगती हैं)

सब गोपियां—हाय २ ! अब क्या करें ! किस प्रकार प्राण बचावें ? चारो ओर से भयंकर आग की लपट आ रही है, भागने की कोई भी राह दिखाई नहीं पड़ रही है।

(सब इधर उधर भागती हैं)

राधा—अरी तुम सब पागल तो नहीं हो गई हो ? इन महा सागर रूपी माधव को छोड़ अज्ञान की तरह मृगजल की ओर किधर भागी जा रही हो ? तुम्हारी आँखों में माया का पर्दा पड़ा है ! तुम्हारे अन्तःकरण के ज्ञान रूपी द्वार में अज्ञान का ताला जड़ा है। इस कारण तुम्हारी अंधदृष्टि को इनका सत्य स्वरूप किस प्रकार दीख सकेगा ?

जिनकी इच्छा मात्र से ये पंच भूतात्मा बनी ।
तेज आकाश जल पवन मिट्टी में है ये सब सनी ॥
उनकी आज्ञा से ये दावानल क्या मिट सकता नहीं ।
छोड़ उनको शान्ति सुख क्या और मिल सकता कहीं ॥

३ गोपी—हाँ २ क्यों नहीं ? खूब शान्ति-सुख मिलेगा, इन माधव की भक्ति आज हमें खूब फलीभूत हुई। बचाओ २ हे कुल-स्वामिनी माता ! हमें इस आग की लपट से बचाओ।

राधा—माधव ! तुम्हारी अनन्त शक्ति को ये अज्ञान मूढ़ात्मा कुछ भी नहीं जानती हैं। तुम्हारे श्रीमुख में अग्नि वास करती है। अतः उस अपनी प्रचण्ड तेजराशि को पुनः अपने में लीन बनाकर इन भय व्याकुल प्राणियों को शान्त करो, अपने कृपा रूपी मेघ की इन पर वर्षा कर इन्हें प्रफुल्लित करो।

माधव—राधा ! मैं फिर भी कहता हूं कि तुम उज्वल प्रकाश के धोखे में अंधकार की ओर दौड़ी जा रही हो। एक तुच्छ कंकड़ को हीरा समझ माथे का ताज बनाना चाहती हो। मेरी मुरली की ध्वनि ने जब से तुम्हें यह सौभाग्य प्रदान किया तब से मुझमें तुम ब्रह्म स्वरूप की योजना कर रही हो। मुझपर तुम्हारी अपार भक्ति है। इस कारण ब्रह्मज्ञान की साधना में तन्मय हो रही हो, किन्तु तुम्हारी वह अचल निष्ठाभक्ति-प्रेम फलीभूत हो ! सचमुच मुझमें वैसी शक्ति नहीं।

राधा—बस २ प्रभो ! दासी को अब अधिक अपनी माया में न भुलाइये, बजाइये, अपनी वही प्यारी मधुरध्वनि वाली मुरली बजाइये। इसकी स्वर्गीय अलापों का झरना बहा कर अमृत की वर्षा बर्साइये, और इस प्रचण्ड अग्निकाण्ड को शान्त बनाइये।

बजा दो फिर वही बंशी मृतक में प्रान आ जाये।
बजा दो फिर वही बंशी कि अनहद गान हो जाये॥
बजा दो फिर वही बंशी कि सूखे वृक्ष फल लाये।
बजा दो फिर वही बंशी कि हृदय में भक्ति-बल आये॥

(माधव मुरली बजाते हैं। धीरे २ दृश्य बदलता जाता है, राधा और गोपियाँ उनकी आरती उतारती हैं)

यशोदा रानी का बाग

(यशोदा और राधा का मय सहेलियों के साथ आना)

गाना

सहे०—हरषित मन हो गाओ सखीरी,
सजन मिलन को आवेंगे।
लपटि झपटि अति प्रेम मुदित मन—
हँसी हँसी अंक लगावेंगे॥
बहत पवन अतिमंद सुगंधित। हर०—

यशोदा—राधे ! भला अभी आये तुम्हें जरा देर भी न होने पाईकि बस जाने की जल्दी मचाई ! क्या घर में कोई बच्चा

रोता है जो उसे दूध पिलाना है, या चूल्हा फूक २ कर हाथ जलाना है ?

राधा—(लजाकर) नहीं माता जी ! संध्या काल हो गया है।

यशोदा—संध्याकाल हो गया तो होने दो इससे तुम्हारा क्या नुकसान है। क्या यहाँ तुम्हारा कोई हानि है ?

१ सहेली—पर माता जी ! इनका क्षण भर का भी वियोग अनयराज से नहीं सहा जाता है। इसी लिये बिचारी इतनी घबरा रही हैं, अकुला रही हैं।

यशोदा—क्यों राधे ! यही बात है ?

राधा—जी नहीं माता जी ! किन्तु।

२ सहेली—हाँ हाँ, किन्तु क्या वह भी कह डालो, न शर्माओ।

राधा—माता जी ! जब मैं इधर को निकली, तो वे घर आ गये थे।

यशोदा—तो तुम अनय को छोड़ इधर आई क्यों ? क्या न आती तो मैं नाराज हो जाती ?

राधा—आप नाराज न होतीं यह आपका बड़प्पन है, किन्तु आपका प्रेम से बुलाना, मेरा न आना कितनी ढिठाई है ?

यशोदा—भला राधे ! तुम घर में अकेली कैसे रहती होगी, जब अनय दरबार जाते होंगे उस समय दिन काटना तुम्हें बड़ा कष्टकर मालूम होगा। ईश्वर यदि कोई बाल-बच्चा तुम्हें प्रदान करे, तो तुम्हारा आनन्द से मन बहले ?

राधा—नहीं, माता जी ! मुझे कोई कष्ट नहीं होता। जब मैं अकेली रह जाती हूँ, तो ईश-चिन्तन में ही समय बिताती हूँ, उसी में आनन्द-मग्न हो जाती हूँ।

यशोदा—किन्तु ईश-चिन्तन करने का अभी तुम्हारा समय नहीं है। जिस प्रकार यौवन लावण्य और सुन्दरतासे भरपूर होकर

युवतियाँ अवस्थापन्न होती जाती हैं, उसी प्रकार उनकी सन्तान-कामना भी दिन २ बढ़ती जाती है। जब तुम छोटी थी उस समय निर्जीव मिट्टी के पुतले को ही सन्तान समझ उसका चुम्बन लेती थी, उसे नहा-धुला कर झूले पर सुलाती थी। क्या ये सब पुत्र कामना के लक्षण नहीं हैं? अतः अवस्था के साथ पुत्र-प्रेम की कल्पना का बढ़ता जाना स्वाभाविक है।

राधा - किन्तु यह मैं कैसे मान लूँ कि सन्तान होने से ही आयुष्य सार्थक होता है। यदि सन्तान हठीला और उद्धत हो, तो फिर माता-पिता को अपनी उस कामना का क्या प्रतिफल मिला, कौनसा सुख हुआ?

यशोदा—किन्तु उद्धत कष्ट पहुँचने वाला संतान होगा, ऐसी कल्पना क्यों करती हो?

राधा—माता जी! आपका ऐसा सौभाग्य सब स्त्रियों को प्राप्त हो, यह असम्भव है। अवश्य ही आपका यह पूर्वजन्म का संचित पुण्यफल उदय हो आया। जिसके प्रताप से साक्षात् जगत्पति ईश्वर ने आप के उदर से नररूप धारण कर अवतार लिया और आपको अति आनन्द दिया।

यशोदा - किन्तु तुम्हारे सद्गुणों को देख कर मुझे विश्वास होता है कि अवश्य ही किसी ईश्वरीय अंश का तुम्हारे गर्भ से आविर्भाव होगा।

राधा—किन्तु माता जी! ईश्वरीय अवतार के पालन-पोषण करने की शक्ति मुझमें नहीं है। आप अपने तपोबल के प्रभाव से उनकी माता हो सकीं तौभी आप को उन्हें अपना विराट स्वरूप दिखाना ही पड़ा।

यशोदा—अहा! राधा! तुम अपने भाषण से उसका दैवी चरित्र याद दिला कर मुझे प्रमुदित कर रही हो। वह दृश्य मेरी

राधा—किन्तु यह मैं कैसे मानलूँ कि सन्तान होने से ही आयुष्य सार्थक होता है।

आँखों से कभी नहीं भूलता। एक दिन जब माधव एक वर्ष का था मैं कोई काम कर रही थी, उसने चट मेरी आँख बचाकर कंकड़ मुँह में डाल लिया। मेरी नजर पड़ते ही मैंने उसे मुँह खोलने के लिए ताड़ना की उसने रोकर जो मुँह दिखाया मैं एकदम आश्चर्यचकित हो जड़वत् हो गयी। देखा मिट्टी की अपेक्षा सारा विश्व-ब्रह्माण्ड उसके उदर में विद्यमान है। माना सहस्र सूर्य-रश्मियों का तेज वहाँ प्रकाशमान है।

राधा—अहा! धन्य आप और आप का पुण्यबल कि आप को विश्व-रूप का दर्शन प्राप्त हुआ। सामान्य दृष्टि वालों को परमेश्वरी रूप प्रत्यक्ष होने पर भी दीख नहीं पड़ता। इस कारण व्यर्थ लोग उनकी निन्दा करते हैं, उन पर नाना दोष धरते हैं।

यशोदा—अहा! उस समय माधव का असली सत्य स्वरूप दिखाई देने लगा। किन्तु तौभी मातृ-प्रेम की कोई थाह नहीं। परमेश्वर ने तुम्हें मातृ सुख से दूर रखा है। इसी से मैं अधिक चिन्तित रहती हूँ और तुम्हें प्रसन्न रखने की यथासाध्य चेष्टा करती हूँ।

राधा—अहा! माताजी! यह मेरा परम सौभाग्य है कि आप का इस दासी पर इतना प्रेम है। यद्यपि मुझे अपनी जन्मदात्री माता का सुख, सहवास नहीं प्राप्त हुआ, किन्तु आपने वह सुख देकर मेरा सौभाग्य बढ़ाया—मेरे मन को अति आनन्द पहुँचाया।

यशोदा—अच्छा, बेटी! अब अधिक समय हो गया जाओ अनय तुम्हारे लिये व्याकुल हो रहे होंगे। आशीर्वाद देती हूँ कि तुम्हारा सौभाग्य अचल हो, मनोकामना सुफल हो।

(दोनों जाती हैं। दूसरी ओर से नन्द और दो तीन गोप आते हैं)

नन्द—बस २ जाओ! अधिक बक २ कर मेरा माथा न दुखाओ। माधव के सम्बन्ध में तुमने आज तक बहुत शिकायतें

की हैं। सदा से ही तुम उस पर बड़े २ दोष लगाते हो, बात २ पर उसकी निन्दा गाते हो; परन्तु तुम्हारे शब्दों पर मुझे विश्वास नहीं होता, तुम्हारे कहने से मैं उसे दण्ड दूँ—यह कुछ भी समझ में नहीं आता।

१ गोप—महाराज! हम भी यह नहीं चाहते कि आप माधव को कोई भयानक दण्ड दें। माधव अभी बालक है, परन्तु उसका लड़कपन जब अधिक हमें दुख देने लगा, तो हमें आप के पास आकर उसके विरुद्ध मुँह खोलने को विवश होना पड़ा यदि उसका लड़कपन हमारी अप्रतिष्ठा करने पर उद्यत हो तो आप ही बताइये हम किसके पास न्याय के हेतु जाँय—किसे अपना दुखड़ा सुनायें?

नन्द—किन्तु माधव पर तुम्हारा यह मिथ्या अभियोग है। कुछ भी नहीं, केवल तुम्हारे शिर में यह एक प्रलाप का रोग है।

२ गोप—प्रलाप नहीं महाराज! यह हमारा सत्य अभियोग है। आप हमारे राजा पिता के समान हैं। प्रजा यदि कोई अपराध करे, तो राजा उसे दण्ड देता है। तो क्या पुत्र कोई भारी अपराध करे तो उसे दंड देना राजा का धर्म नहीं? उसे कुकर्म में प्रोत्साहित कर प्रजा को कष्ट पहुँचाना क्या यह राजा का अन्याय कर्म नहीं? हमारी स्त्रियों—

नन्द—बस २ खबरदार! जाओ। मेरे क्रोध को अधिक न भड़काओ। उस निर्बोध बालक माधव, जो संसार का आचार व्यवहार अभी कुछ भी नहीं जानता, जिसके मन में पाप की अभी छाया तक नहीं पड़ी है, उसे व्यभिचारी के नाम से पुकारते हो, उस पर इतना भारी अपराध लगाते हो? जिसके जन्म लेते ही मेरे राज्य की इतनी वृद्धि हुई उसी निष्कलंक बालक को ऐसा कहते तुम्हें लाज नहीं आती? एक निरपराध व्यक्ति को इस

प्रकार लाञ्छना पर लाञ्छना देते हो फिर भी तुम्हारी जिह्वा गल नहीं जाती ?

३ गोप—महाराज ! हमारी धृष्टता क्षमा हो ! जब से माधव ने जन्म लिया है, तब से कष्टों की और भी वृद्धि हो गयी। हमारा सम्राट् कंस हमसे रूठ गया। इन्द्र नाराज होकर जलवृष्टि से गोकुल बहा देने को तय्यार हुए। बड़े २ दैत्यों ने हमें इतना सताया कि हमें प्राण बचाना कठिन हो गया।

२ गोप—महाराज ! इसकी जड़ में अवश्य अनाचार छिपा है। इससे किसी का भी कल्याण नहीं। इससे हमारी समझ में माधव को किसी दूसरी जगह भेज दीजिए। पुत्र-मोह का परित्याग कीजिए।

नन्द—ओह ! तुम्हारे शब्द मेरे कानों में विष डाल रहे हैं। निस्संदेह तुम्हारी बुद्धि विकृत हो गयी है। जिसने पूतना समान राक्षसी का क्षण में वध किया, अकासुर बकासुर का नाश किया, उसके उपकारों को इस प्रकार भुलाते हो उसके इन सत्कामों का यों बदला चुकाते हो ?

१ गोप—महाराज ! क्या यह उपकार कहलाता है ? ऐसा अमानुषिक कर्म मनुष्य कभी कर सकता है ? वह अवश्य राक्षस है। राक्षस की वृत्ति राक्षसी होती है। और भी देखिये। आज विकट अग्निकाण्ड से हमारी स्त्रियाँ राख की ढेर हो चुकी थीं। किन्तु यह तो लम्बोदर महाराज की कृपा हुई कि जिससे हमारी गृहस्थी बच गयी !

नन्द—बस २ जाओ। अब अधिक तुम्हारे इन विषाक्त शब्दों को मेरे कान नहीं सुन सकते। चले जाओ अन्यथा तुम्हें बड़ा भयानक दण्ड भोगना पड़ेगा।

सब गोप—जो आज्ञा ! (प्रणाम कर सब चले जाते हैं)

नन्द—(स्वगत) हैं ! यह क्या बात है कि सब के सब एक मुँह से माधव के विरुद्ध उसकी निन्दा गाते हैं। बात २ पर उसे दोषी बनाते हैं ! क्या वास्तव में माधव अपराधी है ? क्या सत्य सत्य ही माधव का आचार भ्रष्ट हो गया ? नहीं नहीं, ऐसा कभी नहीं हो सकता। आहा ! लो सामने से गुरु जी आ रहे हैं। अब उनसे यथार्थ बात पूछ कर इसका ठीक निर्णय कर लेना चाहिए। यदि माधव वास्तव में अपराधी है, तो उसे अवश्य दंड देना चाहिए।

(लम्बोदर आता है)

नन्द—आइये महाराज ! बिराजिए। दास चरणों में प्रणाम करता है। कहिए सब कुशल मंगल तो है न ?

लम्बो० राजन् ! तुम्हारे राज्य में रहकर भला कौन दुखी हो सकता है ?

नन्द—महाराज ! आप के देवार्चन, पूजा-पाठ में द्रव्य की कमी वा किसी प्रकार का कष्ट तो नहीं है ?

लम्बो०—नन्दराज ! तुम्हारी कृपा से सब कल्याण है। तुम मुझे, मेरे असली रूप को पहचानते हो। इसी से मेरा इतना आदर मान करते हो। किन्तु दुर्दिन के कारण आज कल के लोग नास्तिक हो गये हैं। देवता-ब्राह्मण, संत-साधुओं पर से उनका विश्वास उठ गया है। आज कल कि जैसी दशा हो रही है उससे ये सब देवमंदिर कभी टूट कर गिर गये होते, किन्तु तुम्हारे समान श्रद्धालु, न्यायमूर्ति भूपति के तेज-प्रताप से ही इनका अस्तित्व अभी संसार में विद्यमान है।

नन्द—यह आपकी कृपा है। किन्तु ऐसा कौन अधम नर है जो आप ऐसे ईश्वर-भक्तों पर आघात पहुँचाने को तय्यार है, कृपा कर बताइये तो वह ऐसा कौन कुलांगार है ?

लम्बो०—जाने दीजिए महाराज ! इन बातों को विशेष न

बढ़ाइये, व्यर्थ इससे आप के मन को संताप होगा, आनन्द के बदले अनुताप होगा।

नन्द—नहीं २ महाराज! अवश्य सुनाइये, किसी प्रकार का संकोच मन में न लाइये।

लम्बो०—खैर महाराज! आपकी प्रार्थना से लाचार हूँ। आज ही की घटना बताता हूँ कि मैं जप कर रहा था। माला फेरते २ ईश्वर के नाम के बदले तुम्हारा ही नाम मुख से निकलने लगा। जपमाला के प्रत्येक दाने से तुम्हारे ही नाम की ध्वनि उच्चारित होने लगी। अतः मैंने विचारा कि महाराज को मेरी आवश्यकता है। मैं झट उठ खड़ा हुआ, परन्तु रास्ते में आते ही जो भयङ्कर दृश्य देखा उससे मेरी आत्मा काँप उठी। बस, इससे अधिक नहीं कह सकता। मेरा हृदय थर्राता है।

नन्द—नहीं महाराज! आप अवश्य कहिये।

लम्बो०—क्या कहूँ तुम्हारी प्रार्थना से लाचार हूँ। अच्छा तो मैं ज्योंही सुवर्णपुरी के पास पहुँचा त्योंही तुम्हारे रथ को बड़े बेग से आता देखा, इतने में माधव एक गली से निकल पड़ा और झट कूद कर रथ में बैठ गया। मैंने समझा कि रथ में तुम होगे, किन्तु रथ के पास जाकर जो दृश्य मैंने देखा उससे मेरी बोलती बंद हो गयी। देखता क्या हूँ कि भीतर राधा और माधव बैठे हुए आपस में प्रेमालाप कर रहे हैं। मुझे देखते ही लजा गये और यह हमारी बाललीला है कह कर खिसिया गये। भला अब आप ही बताइये संसार इससे क्या परिणाम निकालेगा क्या वह माधव पर संदेह की दृष्टि न डालेगा?

नन्द - महाराज! माधव अभी बालक है, संसार के चाल व्यवहार से अज्ञान है।

लम्बो०—तुम्हारा सत्य अनुमान है। परन्तु फिर भी मनुष्य

को सावधान रहना चाहिए। जब तक डाली कच्ची रहती है तब तक उसे जिधर चाहे उधर घुमा सकते हैं। उसी प्रकार सन्तान को भी बालकपन ही में सुधार कर अच्छा चाहे बुरा बना सकते हैं। तुम माधव को समझाओ, ठीक राह पर लाने का प्रयत्न करो।

नन्द – आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।

लम्बो०— (स्वगत) आज का तीर तो खाली गया। खैर कोई चिन्ता नहीं, कभी न कभी तो निशाने पर लग ही जायेगा। मनोरथ वर आयेगा। (प्रगट) अच्छा राजन! अब ठाकुर के पूजन का समय हो गया है। मैं जाता हूँ।

नन्द—जैसी इच्छा।

(दोनों का जाना)

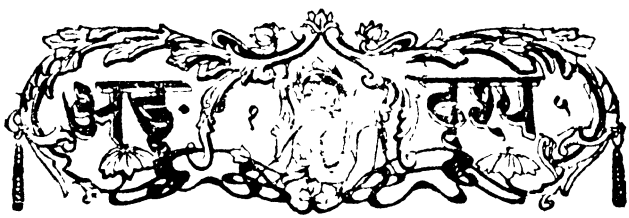

अनयराज का महल

(कामिनी खड़ी बड़बड़ा रही है)

कामिनी – माधव २ तेरा सत्यानाश हो। तूने ही हमारा सोने का संसार मिट्टी में मिला दिया। मेरे पति को मुझसे विमुख कराकर अन्त में समाज से भी नीचे गिरा दिया। अब तू भय्या के पीछे पड़ा है। उनका अपमान करने को कमर कस कर खड़ा है। विचारी सीधी सादी राधा को मुरली की ध्वनि सुना २ कर तूने पागल सरीखी बना दिया। अब उसको न किसी से प्रेम है न नाता, न किसी का डर भय और न वास्ता। ईश्वर! अब शीघ्र

भय्या-भौजी को इस माधव के मायाजाल से बचाइये—कुल में कलंक का टीका न लगाइये।

(अनयराज का आना)

अनय०—बहिन! आज तुम इतनी उदास क्यों हो?

कामि०—अपने प्राणप्यारे भाई की ऐसी पागल सी दशा, उदास मुखाकृति देख कर भी क्या बहिन प्रफुल्लित रह सकती है?

अनय०—क्या कहती हो बहिन! मुझे तो कुछ भी नहीं हुआ।

कामिनी—तुम जो कुछ भी कहो, परन्तु मनुष्य के मन की आन्तरिक वेदना क्या कभी छिप सकती है? जब से राधा तुम्हारा हाथ झटक कर माधव के पास चली गयी तब से सदा ही तुम दुखित और चिन्ताग्रस्त रहते हो, मन ही मन घुल २ कर दुख की ज्वाला सहा करते हो। उस दिन की मेरी बातें तुम्हें बहुत बुरी मालूम हुई थीं। किन्तु यदि तुम ध्यान देकर विचारोगे, तो स्वयं ही समझ जाओगे कि तुम्हारा भाभी के प्रति इतना अटल विश्वास ही तुम्हारे दुख का कारण हो रहा है।

अनय०—बस २ बहिन! जाने दो उन बातों को। राधा कलंकिनी नहीं है। इसका मुझे पूर्ण अभिमान है।

कामि०—इसका मुझे भी भले प्रकार ज्ञान है। परन्तु यदि उसका आचरण यही रहा तो अन्त में तुम्हें एक दिन इसका बड़ा ही विषम फल भोगना पड़ेगा। क्या तुमने कभी यह सोचा है कि भाभी का हर एक वचन माधव क्यों मानता है? उनकी आज्ञा-पालन करने के लिये सदा मस्तक झुकाये क्यों खड़ा रहता है? स्त्री के लिये पति से बढ़ कर संसार में कोई दूसरा देवता नहीं। उसकी आज्ञा का उल्लंघन कर परपुरुष के पास चली जाना, फिर भी मन में कुछ न शर्माना। अस्तु, भाभी के पतित होने के पहिले तुम्हें चेताती हूँ कि इसका ठीक २ अनुसंधान करो। भविष्य

में माधव के पास भूल कर भी जाने न दो—इसका कोई उपाय करो।

(कामिनी जाती है)

अनय—(स्वगत) हैं! मेरा मन इतना चंचल क्यों हो रहा है? राधा के पातिव्रत रूपी संदेह का दावानल कामिनी के मुख से निकल कर मेरे हृदय-कुंज में क्या शोला भड़का रहा है? आह! अब ये बेदना हृदय को अधिक पीड़ा पहुँचा रही हैं। क्या करूँ, मुझे चारों ओर अन्धेरा ही अन्धेरा नजर आ रहा है। क्या कामिनी का कथन सत्य होगा? क्या माधव के साथ उसका अनुचित पाप-प्रेम है? आह! नहीं २ यह मैंने क्या कह डाला? राधा एक विशुद्ध सोना है, उसे अपवित्रता और पापपथ कभी स्पर्श नहीं कर सकता। परन्तु यह संदेह रूपी अग्नि, मेरे हृदय में क्यों बढ़ती जा रही है? भगवान! मुझे शान्ति प्रदान करो। मेरा स्वर्ग-सुख न हरो!

मेरे मन की मलिनता शीघ्र कर दो दूर हे भगवन।
विकट पापों की ज्वाला से धधकता है मेरा तन मन॥

(माधव का आना)

माधव—भाई अनय! मैंने तो आज समझा था कि तुम निद्रादेवी की सुखमयी गोद में खुर्राटे लेते होगे, परन्तु तुम्हें जागते हुए देख मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। तुम्हारी आंखें इतनी लाल क्यों हो रही हैं? क्या तुम अभी गहरी नींद से सोकर उठे हो?

अनय०—सचमुच मैं अभी गाढ़ निद्रा से जागृत हुआ हूँ। परन्तु वह निद्रा बड़ी निराली थी।

माधव—पृथ्वी के प्राणियों को केवल दो प्रकार की निद्रा

ज्ञात हैं। एक निद्रा, दूसरी काल निद्रा। परन्तु जब तुम जाग रहे हो, तो स्पष्ट ज्ञात होता है कि कालनिद्रा ने तुम्हें ग्रस्त नहीं किया।

अनय०—यदि मैं कालनिद्रा में सदा के लिये सो जाता तो, बहुत उत्तम होता।

माधव—भाई अनय! आज तुम यह कैसी बातें कर रहे हो, मुझसे नाराज तो नहीं हो रहे हो?

अनय०—माधव! मैं स्पष्ट कहता हूँ देखो! मैं एक सीधा सादा मनुष्य हूँ! इस लिये तुम्हें भी उचित है कि मेरे साथ सरलता से व्यवहार करो। सुनो—ध्यान देकर सुनो! आज न मालूम क्यों मेरे हृदय रूपी मंदिर में एक भयंकर सन्देह रूपी पिशाच उत्पन्न हुआ है जिसने मेरे सारे शरीर को भ्रष्ट कर दिया और मेरी बुद्धि को हर लिया।

माधव—हैं हैं! यह तुम क्या कह रहे हो?

अनय०—यही कि इस बात के कहने के पहले ही मेरा यदि शरीरान्त हो जाता, तो मेरे मन में यह भयंकर तूफान कभी उठने न पाता। माधव! जिस पर अपना यह तन मन बलिहार किया, जिसके प्रेममन्दिर में आज तक सुख की नींद सोता रहा, जिसके नेत्रों की ज्योति से सदा हृदय-मन्दिर प्रकाशित होता रहा, जिसकी मधुरवाणी से सदा स्वर्गीय-संगीत सुनता रहा—वही देवी आज दानवी हो गयी और वह हृदय-मन्दिर राधा द्वारा छिन्न-भिन्न होकर धराशायी हो गया। उस दिव्य प्रकाश पर प्रलय का महान्धकार छा कर सारा विश्व संसार अन्धकार मय हो गया। उस मधुर वाणी का लय होकर भूत प्रेतों और दानवों की भयंकर चिग्घाड़ सुनाई पड़ रही है। हाय माधव! तुमसे और मैं क्या कहूँ। मेरे मन-मन्दिर की अधिष्ठात्री देवी, मेरी हृदयेश्वरी

राधा आज अपने पातिव्रत धर्म से विमुख हो गई, उसकी सारी पवित्रता अपवित्रता में बदल गयी।

माधव—क्या कहा ? राधा पातिव्रत धर्म से विमुख हो गई ? सतीत्व से नष्ट हो गयी ?

अनय०— हाँ, यदि किसी अपरिचित दुष्ट ने ऐसा किया होता तो मुझे कदापि दुख न होता। किन्तु जिसके निश्छल बर्ताव में कभी संदेह न हुआ, जिसके निर्मल चरित्र का मुझे सदा घमण्ड रहा उसी मेरे मित्र—मेरे अन्तरंग सखा माधव ने उसके पातिव्रता को नष्ट कर दिया। ओह ! ऐसी नीचता ? माधव ! बोलो, मेरे प्रश्न का तुम्हारे पास क्या उत्तर है ?

माधव०—अनय ! ये तुम्हारे सरल स्वभाव के चिन्ह हैं, जो मुझपर प्रत्यक्ष में दोषारोपण कर रहे हो और अपनी संदेह रूपी अग्नि में आपही जल रहे हो। तुम मुझसे उत्तर चाहते हो, मैं भी तुम्हें उत्तर देने को सहर्ष तय्यार हूँ, किन्तु उस पर क्या तुम्हारा विश्वास होगा ?

अनय०—यह तुम अपने हृदय से स्वयं पूछ सकते हो।

माधव—अच्छा, तो सुनो मेरा उत्तर बहुत ही छोटा है। और वह यह है कि हम और राधा दोनों बिल्कुल निर्दोष हैं।

अनय०—क्या मैं तुम पर विश्वास रखूँ ?

माधव—यह तुम्हारे आधीन है। जब अविश्वास रूपी पिशाच मनुष्य के हृदय में अपना घर बनाता है, तब वह साक्षात् परमात्मा पर भी संदेह करने लग जाता है। बस यही दशा तुम्हारी भी है। यदि मेरे कथन पर तुम्हें विश्वास नहीं था, तो व्यर्थ मुझे उत्तर देने को तुमने क्यों आग्रह किया ?

अनय०—इसलिये कि तुम्हारे एक ही शब्द से मेरे मन के सारे संशयों का समाधान हो जायगा, एकही बार तुम्हारे मंत्रो-

धारण करते ही उस ब्रह्मपिशाच की रक्षा होकर मुझे शान्ति लाभ होगा। किन्तु नहीं अभी वह मुझे छोड़ना नहीं चाहता।

माधव—तब फिर तुम्हीं बतलाओ, भला किस प्रकार मैं तुम्हें विश्वास दिलाऊँ? क्या हृदय चीर कर दिखलाऊँ?

अनय०—नहीं, किन्तु जो कुछ मैं तुम्हें करने को कहूँ उसे करोगे?

माधव—राधा का कलंक छूट जाय और वह निर्दोष प्रमाणित हो-इस के लिये माधव नरक में भी जाने को सहर्ष तय्यार है।

अनय०—पर मैं तुम्हें उससे भी अधिक भयंकर कार्य करने को कहूँगा और वह भी इसी समय।

माधव—कोई चिन्ता नहीं, मुझे सहर्ष स्वीकार है।

अनय०—अच्छा तो सुनो—कान लगा कर सुनो। मैं अभी आवश्यक काम के बहाने बाहर जाता हूँ। राधा अब यहाँ आती ही होगी। उसके आतेही मैं यहां किसी गुप्तद्वार से आकर छिप जाऊँगा। तुम उससे असली प्रेम की बातें करने लग जाओ। यदि वह अपने कर्तव्य पर अटल और पवित्र बनी रही तो मेरे हृदय में जो आजतक संशय तथा अविश्वास का बादल उमड़ रहा है वह साफ हो जायगा।

माधव—अनय! क्या तुम पागल तो नहीं हो रहे हो? क्या मेरे उस प्रकार राधा के संग किये हुए प्रेम-संभाषण को सुनकर तुम सहन कर सकोगे?

अनय०—नरक में पड़ने पर वहाँ के सारे निकृष्ट कीड़ों के निरीक्षण करने की सामर्थ्य ईश्वर ने मुझे भली प्रकार दी है। मैंने जो कुछ कहा है वह तुम्हें अभी इसी समय करना होगा।

माधव—अनयराज! मुझे पूर्ण विश्वास है, कि राधा इस परीक्षा में अवश्य उत्तीर्ण होगी। परन्तु परमेश्वरी उद्यान के किसी निर्मल पुष्प को इस प्रकार दुराचार की अग्नि से नाश करना क्या

निष्ठुरता नहीं है ? मैं पुनः शपथ खाकर कहता हूँ कि राधा बिल्कुल शुद्धमूर्ति है। उस पर विश्वास रखो और व्यर्थ के संशय को हृदय से दूर करो।

अनय०—तुम्हारे शपथ पर विश्वास रखना मैं अब नहीं चाहता। राधा तुम्हारे प्रेम का किस प्रकार उत्तर देती है—यह मुझे अवश्य देखना है।

माधव—अनय २ ! मुझे अत्यन्त खेद है कि तुम्हें मेरे शपथ पर विश्वास नहीं है। देखो—पुनः विचारो। कहीं उस निर्मल मूर्ति से असली प्रेम की वार्ता करते २ उसके शाप द्वारा मुझे नष्ट न हो जाना पड़े। इस कारण मैं तुम्हें फिर भी सचेत करता हूँ कि ऐसे अश्लील निन्दनीय कर्म करने के लिये मुझे वाध्य न करो।

अनय०—माधव ! तुम्हारे ऐसे नकली भय मुझे डरा नहीं सकते। तुम्हारी यह भीरुता देख मेरा संशय अधिक दृढ़तर होता जाता है। कायरों की भाँति तुम्हारा यह वार्तालाप मेरे अविश्वास की जड़ को और भी सुदृढ़ बना रहा है। भला बताओ तो पवित्रता का स्वाँग तुम कब तक निबाह सकोगे ? ब्रह्मज्ञान की झूठी गप्पें मार कर तुम, लोगों को कब तक फंसा सकोगे ? धैर्य की आत्म प्रौढ़ विचार मिथ्या ब्रह्मज्ञान अनुचित धैर्य इन सब का भंडा आज तुम्हारे ही हाथों से फूटेगा।

माधव—खैर यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो मैं सहर्ष तय्यार हूँ। जब तुम अपने ही हाथों से आग जला कर राधा को तपा देखना चाहते हो तो जाओ, देखो, निश्चय जानना कि राधा अवश्य तप्त स्वर्ण की भाँति देदीप्यमान होगी।

अनय०—किन्तु इतना ध्यान रखना कि यदि इस काम के करने में किंचित मात्र भी त्रुटि होगी तो मेरे समान एक सात्विक स्वभाव वाले मनुष्य के साथ छल करने का महान पाप लगेगा।

माधव—(स्वगत) अहा ! मानव जाति का स्वभाव कैसा विलक्षण है । जिस समय संशय का बादल इनके सिर पर मड़राने लगता है । उस समय यह अनुचित से अनुचित कार्य भी करने को तय्यार हो जाते हैं । क्या इस विश्वनाटक को नष्ट कर दूँ ? अपना यह माया का फैलाव आज ही तोड़ डालूँ ? नहीं नहीं, ऐसा करने से अभी यह अपनी असली रंगत नहीं प्रकट कर सकेगा । (प्रकट) अच्छा जाओ एक कोने में छिप जाओ । यदि तुम्हारी यही इच्छा है तो आज तुम पूर्ण रूप से देखोगे कि इस विश्व रंगभूमि पर नृत्य करने वाले नटों में से एक ऐसी भी होनहार आत्मा नाट्य कर रही है जिसे संसार के सारे दुर्गुणों की गंदी हवा नहीं छू सकी । आज तुम मुझसे दिव्य शृंगार रस का पाठ सीखोगे देखो देखो, वह मधुर नुपूर की ध्वनि राधिका के ही आगमन की सूचना दे रही है । अतः मैं अब तुम्हारे बताये हुए नाटक का अभिनय प्रारंभ करता हूँ ।

(अनयराज एक कोने में छिप जाता है । माधव एक कोने में बैठते हैं । राधा आती है ।)

राधा—अहा, जिस प्रकार कुबेर का धन भंडार लूट कर लोग धन कुबेर बन बैठते हैं, उसी प्रकार मैं भी अनयराज की अथाह प्रेमराशि को लूट कर सती बन बैठी । स्वामी का मुझ पर कितना अगाध प्रेम है, कितना स्नेह है, उसी प्रेमाकाश में मैं चमक रही हूँ । उसी प्रेम सरोवर में मैं सदा क्रीड़ा करती हुई उस प्रेम फव्वारे की हर एक धार से मैं प्रफुल्लित रहती हूँ । जिस प्रकार जल कुंड के फुहारे से निकले हुए जल धार की प्रत्येक किरणें उसी जल में गिर कर लय हो जाती हैं, उसी प्रकार मैं भी अपने स्वामी के प्रेम में सदा लय रहती हूँ । क्या मेरी यह खिली प्रेम की कली अपने वृद्ध केन्द्र से च्यूत होगी ? क्या मेरा यह प्रेमनध

मुझसे कोई छीन सकेगा ? मेरे समान सुखी और कौन है ? अनय-राज ऐसे पति और माधव ऐसे साक्षात् ईश्वर पाकर भी क्या कोई दुखी रह सकता है ? (माधव को देखकर) अहा ! कौन माधव मेरे परमात्मा ! आप यहाँ विराजमान हैं ! कहो, यहाँ बैठ कर सृष्टिकर्ता ! तुम किसके ध्यान में लवलीन हो रहे हो ?

माधव—प्यारी राधा ! माधव अपनी आराध्य देवी राधा के अतिरिक्त और किसका ध्यान कर सकता है ?

राधा—हैं माधव ! आज तुम यह कैसी बातें कर रहे हो ?

माधव—राधे ! आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है। मेरा हृदय तुम्हारे प्रेम की हिलोरें ले रहा है। तुम्हारे मुखचन्द्र के पूर्ण प्रकाश से मेरा मन-मन्दिर देदीप्यमान हो रहा है।

राधा—माधव २ !! आज तुम्हें क्या हो गया ? क्या तुम्हारा वह सब ब्रह्मज्ञान एक नारी के रूप को देखते ही खो गया ? क्या तुम यह समझते हो कि मैं तुम्हारी इन बातों से प्रसन्न हो जाऊँगी ? क्या मेरा सौन्दर्य्य आज मेरी भक्ति में बाधा डालेगा ? आज क्या ईश्वरीय आत्मा इस मानवीय देह का स्पर्श करतेही अपना स्वरूप भूल गई ? क्या तुम्हें यह नहीं मालूम कि मेरे स्वामी के अतिरिक्त यदि किसी और के मुख से यह शब्द निकले तो मैं उसे शाप द्वारा भस्म कर सकती हूँ ?

माधव—यह सब सत्य है। किन्तु मैं क्या करूँ। विवश हूँ। तुम्हारी प्रेममयी मूर्ति मेरे हृदय पट पर इस प्रकार अंकित हो गयी है कि सिवाय तुम्हारे मुझे और कुछ भी दीख नहीं पड़ता। एक सुन्दर स्त्री की आँख में रहने वाले जादू में वह अपार शक्ति है कि जिस पर तीनों त्रिलोक में कोई भी विजय नहीं पासकता। संसार की बड़ी से बड़ी शक्ति भी इसके सामने ठहर नहीं सकती। जब महामुनि विश्वामित्र, पराशर आदि मेनका रम्भा और मत्स्यगंधा

के सामने महाशक्तिवान होने पर भी गौरव की रक्षा न कर सके तो भला मैं एक तुच्छ जीवधारी तुम्हारे इन नैन-बाणों का किस हथियार से सामना कर सकता हूँ। प्यारी! तुम्हारे प्रेम ने मुझे पागल कर दिया है। तुम्हारी इस मोहनी मूर्ति ने मेरे मन को हर लिया है। अतः मेरे प्रेमदान को स्वीकार करो, उसका प्रतिदान देकर इस प्रेम-समर से मेरा उद्धार करो।

राधा—माधव! मैंने तुम पर विश्वास किया। तुम्हें ब्रह्म रूप समझ कर तुम्हारी एकनिष्ठ भक्ति की। क्या उसका यही फल है—यही प्रतिदान है?

माधव—राधे! तुम्हारी एकनिष्ठ भक्ति से, मैं संतुष्ट हूँ। परन्तु मैं क्या करूँ। हृदय को बहुत मनाता हूँ पर वह नहीं मानता। मैं तुम्हें भूलना चाहता हूँ किन्तु भूल नहीं सकता। पलकों के हरेक रोम २ मे तुम्हारी ही मूर्ति बसती है, राधा २ बस यही एक कर्ण मधुर-ध्वनी सारे ससार में सुनाई पड़ती है।

राधा— मालूम होता है कि तुम्हारी दैवी वृत्तियों में अवश्य आज आसुरिक वृत्तियों का संचार हुआ है। पापी पिशाच ने तुम्हारे पवित्र मन पर आज अधिकार जमा लिया है।

माधव—निस्संदेह प्रिये! आज मेरा मन मेरे वश में नहीं है। तुम्हारे प्रेम ने मुझे अंधा बना दिया है। यदि तुम्हें संसार का डर हो तो मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ, कि इस प्रेमको कोई नहीं जान सकेगा। पराशर मुनि को धीवर-कन्या से रति करते समय अपने आस पास के अंधकार का आवरण लेना पड़ा था। परन्तु मैं प्रकाश को इतनी प्रखरता बढ़ा दूँगा कि अपने विलास स्थान पर दृष्टि फेकने वालों के नेत्र सदा के लिये अंधे हो जायँगे।

राधा—हरे हरे! माधव! तुम इतने भ्रमिष्ट और नीच कैसे हो गये? मेरे कोमल हृदय पर ऐसे कठोर शब्द कहते तुम्हें लज्जा

क्यों नहीं आती ? तुम्हारा वह ब्रह्मज्ञान कहाँ चला गया ? तुम्हारा वह सभ्यता पूर्ण भाषण, तुम्हारी वह उदात्त कल्पनायें, तुम्हारे वह गूढ़ विचार, अतुल पराक्रम अनुपमेय धैर्य क्या सदा के लिये नाश हो गये ? मेरे भगवान, आज तुम्हें क्या हो गया ? ऐसी अश्लील बातें तो सामान्य मनुष्य भी नहीं कह सकता।

माधव—संसारी बातों को जाने दो। इसमें सन्देह नहीं कि यह विलास-मन्दिर मानवी शिल्प कौशली से परिपूर्ण है। किन्तु मेरा विलास-मन्दिर तुमने नहीं देखा। मेरी प्रेम-नौका में तुमने विहार नहीं किया। मेरी प्रेम-शय्या पर तुमने सुख-निद्रा नहीं लिया। मेरे दीपकों के दिव्य प्रकाश में तुम नहीं खेली। अतः आओ आओ! इस रमणीय प्रेम-सरोवर में तैरते हुए असंख्य सुवर्ण कमलों में महा श्रेष्ठ सहस्र दल नौका में पैर रखो।

(दृश्य बदल जाता है. सरोवर में कमल और कमल में राधा माधव दिखाई देते हैं)

चलो प्रिये राधा चलो! सुवर्ण केतकी के सुवास को लज्जित करने वाले तुम्हारे यह स्वासोच्छवास की गहरी सुगंधि से यह तटस्थ कमल-दल नाव के समान डोल रहा है। आओ, इस कमल नौका को नचाते नचाते हम इस सरोवर में जल विहार करें।

राधा—क्या इस काल्पनिक शृंगार कल्पनाओं के वशीभूत होकर मैं पति सेवा से विमुख हो जाऊँगी ? पति-धर्म से मुँह फिराऊँगी ? नहीं २ कदापि नहीं। तुम्हारा यह स्वर्गीय सरोवर तुम्हारे इस आडम्बर पूर्ण कुत्सित भाषण से नरककुण्ड का स्वरूप धारण करना चाहता है। यह कमलों की प्रेमनौका नहीं, परन्तु तुम्हें और मुझे डुबाने वाला भयंकर नरक का द्वार है। और उसके समीप जो कमल है वह सब नरक के कीट हैं।

माधव—क्या यह विहार स्थान तुम्हें पसन्द नहीं है ? तो चलो, इससे भी सुरम्य और सुन्दर स्थान में तुम्हे ले चलें। आओ, इन मेघों के दिव्य विमान में बैठो और आनन्द विहार करो।

राधा—बस २ माधव ! अपने इन घृणित चित्रों का दृश्य दिखलाना बंद करो। अन्यथा तुम्हारे इस गंदे और पापी विचारों की वर्षा होकर समस्त संसार को गाढ़ अंधकार में डुबा देगा। विषयों का मद चढ़ जाने से तुम्हारे पाँव का पंचामृत, घट से स्पर्श होते ही उलट पलट कर शोणित-समुद्र में बदल जायगा।

माधव—राधा ! भला तुम्हें यहाँ किस बात की कमी है ?

राधा - मेरे स्वामी की मेरे पति की, विना स्वामी के सारा संसार स्त्री को शून्य ज्ञात होता है।

माधव—राधे ! क्या अनय के सहवास की तुम्हें अब तक इच्छा है ? जिस रमणीय स्थान में मैं तुम्हें ले जाना चाहता हूँ वहाँ अनयराज का प्रवेश नहीं हो सकता। राधे ! यह देखो, (ताली बजाना, दृश्य का बदल जाना, एक सुन्दर चन्द्रकोर के मंच पर माधव लेटे हैं और उनके पास राधा खड़ी है) कल्पनातीत शृंगार के परमावधि का यही स्थल है। अगणित दिव्य प्रकाशों के प्रकाश में उस स्वयं प्रकाशित मंत्र के स्पर्श करने का शक्ति मनुष्यों को तो क्या देव, गन्धर्वों को भी नहीं है। अतः राधे ! प्राणेश्वरी राधे ! आओ, अपने मधुर हास्य से मेरे हृदय की ज्योतियों को उत्तेजित करो। अपने प्रेमालाप से मेरे कानों को पवित्र कर विश्व को निनादित करो।

राधा—माधव ! मैं तुमसे पुनः प्रार्थना करती हूँ कि इन स्वर्गीय प्रलोभनों को दिखा कर मुझे पाप के पंक में न गिराओ। यदि तुम मुझे वास्तव में प्रसन्न करना चाहते हो, तो अनयराज को यहाँ ले आओ। मैं उन्हीं के साथ इस मंच पर बैठूँगी। उन्हीं

के साथ स्वर्ग गंगा में नहाऊँगी। उन्हीं के सहारे मैं भवसागर से पार उतर कर बैकुण्ठ जाने का द्वार पाऊँगी।

माधव राधा प्यारी राधा! इस स्वर्गलोक में भला अनयराज कहाँ आयेगा। जहाँ देव गन्धर्व का साया तक नहीं पड़ सकता वहाँ एक मनुष्य जाति का आना असम्भव है। बस अब अधिक विलम्ब न लगाओ, आओ मेरे हृदय से लग जाओ।

तुम्हारे प्रेम-मंदिर का बना अब मैं पुजारी हूँ।
बस कह दो एक बार मुँह से कि प्रीतम तुम्हारी हूँ॥

राधा—बस २ दूर हो पापिष्ठ नारकीय पिशाच! क्या तू चाहता है, कि छल द्वारा मेरे सतीत्व का हरण कर ले? कभी नहीं। यदि तू परमेश्वर है तो भी मेरे इस जड़ शरीर को, मेरे प्राणनाथ के अतिरिक्त किसी को छूने का अधिकार नहीं।

माधव—किन्तु प्यारी इस समस्त जगत पर मेरा अधिकार है। यह तुम्हारा रोष वृथा है। (राधा का हाथ पकड़ कर खींचना)

राधा—चाण्डाल, अधम पिशाच! तू नहीं मानता तो ले मेरा शाप ग्रहण कर। यदि मैंने अपने पति देव पर एक निष्ठ से प्रेम किया है, यदि मेरी ईश्वर पर अचल भक्ति हो तो...(एकाएक दृश्य बदल कर पुनः अनयराज का महल हो जाता है, माधव अदृश्य हो जाते हैं। अनयराज आकर राधा को आलिंगन में बाँध लेता है)

अनय०—शान्त! शान्त! प्यारी राधा! शान्त हो। और माधव की अपेक्षा मुझ अधम को श्राप देकर जला डालो। मैं ही इसका मूल कारण हूँ। मैं ही तुम्हारा अपराधी हूँ।

राधा—कौन प्राणनाथ! प्राण प्यारे! आह! मुझे क्षमा करो।

अनय०—प्रिये! मैंने तुम्हारे पातिव्रत में संदेह करके तुमको और माधव को निर्दोष साबित करने के लिए माधव से ऐसा करने को कहा था। माधव निर्दोष है, निष्पाप है। निष्कलंक है।

राधा – तो क्या आपको मेरे पातिव्रत में संदेह हुआ ? आह, यह मैं क्या सुन रही हूँ ? स्वामी ! नाथ ! मुझसे निर्मल प्रेम करने वाले आपके हृदय को इस संशय रूपी पिशाच ने कैसे सताया !

अनय०—राधा ! मुझे क्षमा करो । अब इस विषय में अधिक बातें कर मुझे लज्जित न बताओ । मैं तुम्हारा चिर अपराधी हूँ, मुझे अँधेरे में से प्रकाश में ले आओ ।

राधा—नाथ ! यह आप क्या कहते हैं । मैं आपके चरण कमलों की दासी और आपकी सेवा की सदा अभिलाषी हूँ ।

(राधा शीश नवाती है । पीछे का पर्दा फटकर विष्णुलोक नजर आता है । कृष्ण, रुक्मिणी और सत्यभामा के साथ बैठे हुए विहार कर रहे हैं ।)

ड्राप ।

(राधा का शयन-मंदिर)

गाना ।

राधा—रहि २ हिया में उठत मोरे पीर ।
निशि दिन पल छिन, चैन न आवे,
विकल रहत शरीर ॥ रहि०—
अन्तर पीर कठिन दुखदायी ।
धरत नहीं मन धीर ॥ रहि०—

संसार की अंगूठी में जिस प्रकार सूर्य्य नगीने के रूप में प्रकट होकर उसके सौन्दर्य को बढ़ाता है, उसी प्रकार मेरे शरीर रूपी मुद्रिका में अनयराज का सच्चा प्रेम ही जगमगा कर इस तुच्छ मुद्रिका की मर्यादा बढ़ाता है । माधव ! मैं इस संसार में केवल यही चाहती हूँ, कि पति में मेरी एकनिष्ठ प्रीति हो, आप के चरण-कमलों में एकनिष्ठ भक्ति हो । अहा ! कल की लीला में अनयराज के हृदय में मेरा शुद्धाचरण भली भाँति प्रवेश कर गया । और माधव की भक्ति में क्या शक्ति है, इसका भी उज्ज्वल दृष्टान्त प्रकट हो गया । परन्तु समझ में नहीं आता कि मेरे कर्तव्य में कौन सी कमी पड़ी जिससे यह संदेह कि अग्नि अनयराज के मन में हुई । आह उद्वेगावस्था में क्रोध के वशीभूत हो मैं माधव को शाप दे रही थी । हाय ! उस शाप का प्रायश्चित्त मैं अब किस भाँति करूँ ? सम्भव है यह संदेह रूपी चपला अनयराज

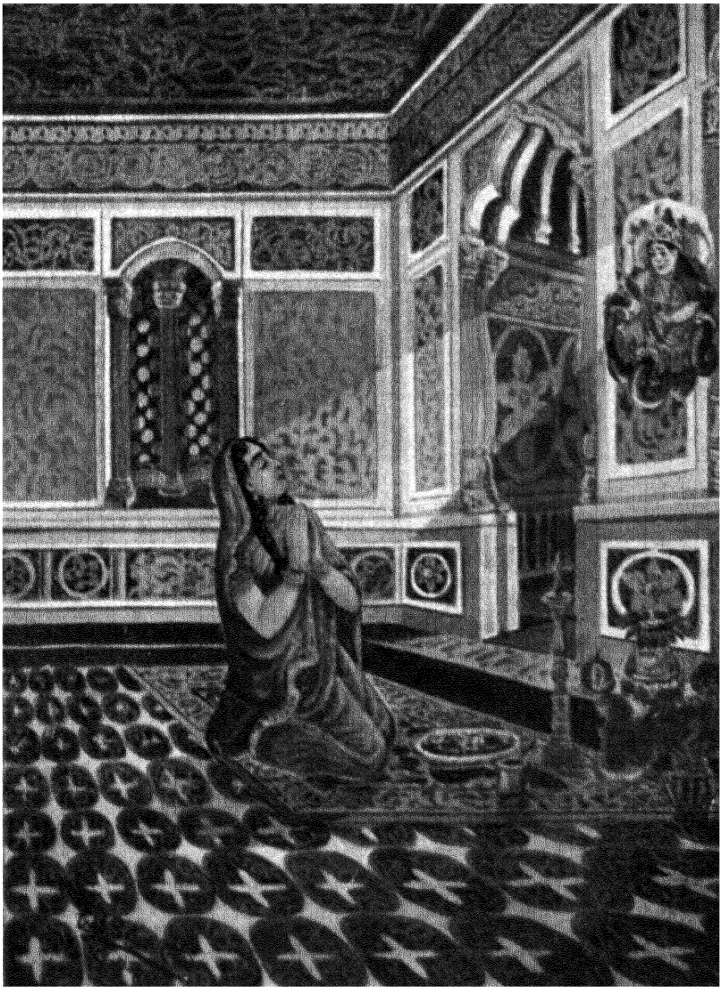

जैन मंदिर।

के हृदयाकाश में चमक कर मेरी प्रीतिलता को एकबारगी ही छिन्न भिन्न कर चली गयी । क्योंकि इसी संदेह की चपेट से संतापित हो श्रीरामचन्द्रजी ने, रावण के बंदीवास में पति वियोग के महान क्लेशों के सहन करनेवाली विरहकातरा श्रीसीता देवी का एक मूर्ख धोबी के कथन पर परित्याग किया। अपने पति प्रभु रामचन्द्रजी की प्रेममयी गोद में गाढ़ निद्रा में ब्रह्मानन्द का उपभोग करने वाली श्रीजानकीजी पुनः बनवास के कष्ट उटाने को बाध्य हुई। तो मेरी बिसात ही क्या? परन्तु सौभाग्य से माधव की दिव्य योजना से अनयराज का मन शुद्ध होकर मेरी पतिभक्ति में दृढ़ विश्वास हो गया। अहा, इस आनन्द की शीतल वायु में मेरा हृदय इस समय एक पक्षी के समान उड़कर इधर उधर आनन्द विहार कर रहा है। उस वायु की प्रत्येक अणु मेरे कानों को यह आनन्द समाचार सुना रही है। हृदय के पक्षी! धैर्य धर। इस प्रकार अधीर न हो अब मैं इस दिव्य प्रेम मंच पर बैठ कर गाढ़ निद्रा का उपभोग करूँगी। अनयराज के आते ही इस पुष्पमाला की अपेक्षा मेरी कर माला उनके गले में शोभा देगी। इस कुसुम गुच्छ की अपेक्षा मैं अपना हृदय गुच्छ उन्हे अर्पण करूँगी। इन सुगन्धित तेलों की अपेक्षा मैं अपने मधुर स्वास के परिमल से उन्हें तृप्त करूँगी। और नेत्रों की पंच आरती उतार कर उसी मूर्ति के ध्यान में लीन हो जाऊँगी। (राधा को धीरे २ निद्रा आती है)

(राधा सोती है। कामिनी और अनयराज आते हैं)

अनय०—क्या कहा? तुम सब आड़ में बैठ कर सुनती थीं? उन लोगों ने मिलकर मुझे उल्लू बनाया? मुझे धोखा देकर माया के जाल में फँसाया? तो क्या मैं राधा के सतीत्व में शंका लाऊँ? माधव छली है, मायावी है, इस बात को मान जाऊँ?

नहीं २ अवश्य तुम्हारी आँखों ने तुम्हें धोखा दिया। अज्ञान रूपी पिशाच ने तुम्हारी ज्ञान दृष्टि को हर लिया।

कामिनी—नहीं २ भैया! यह तुम्हारी साधुता और भोलापन है जो तुम्हारे हृदय को दुर्बलता और अंधप्रेम का परिचय दे रहा है। कमलनौका, मेघ विमान, और चंद्र मंच, ये सब क्या जादू का खेल नहीं? जिस प्रकार बालक को लोग चन्द्रखिलौना दिखाकर फुसलाते हैं, उसी प्रकार छली और प्रपंची लोग तुम्हें जादू का तमाशा दिखाकर अपने मायाजाल में फँसाते हैं। इस कारण, यदि तुम इसपर ध्यान दोगे, विचार दौड़ाओगे तो अवश्य इसमें सत्यता का आभास पाओगे।

अनय०—ओह! कामिनी २! क्या तू यह कहना चाहती है कि कल के दृश्य को जादू का खेल समझूं? ऐसी कठिन परीक्षा रूपी कसौटी में कसे जाने पर भी उस तप्त कंचन को भ्रष्ट जानूँ? स्वर्गीय पारिजात को एक तुच्छ बन-कुसुम कहकर मानूँ।

कामिनी—मानना न मानना यह तुम्हारा अधिकार है किन्तु राधा माधव का प्रेम अनुचित है वा उचित-यही इस समय एक गूढ़ विचार है क्या माधव के संकेत मात्र ही से राधा सावधान नहीं हो सकती। इसपर भी तुमने कुछ विचार किया है? इसी से मैं कहती हूँ, कि तुम बिल्कुल ही भोले भाले मिट्टी के पुतले हो, प्रेम के अनुराग में पागल हो गये हो? तुमपर जादू कर दिया है।

अनय०—(स्वगत) क्या सचमुच मैं पागल हो गया हूँ। मुझपर जादू कर दिया है। (प्रगट) किन्तु कामिनी! फिर भी तेरी बातों पर विश्वास करूँ, इसपर मेरा मन तय्यार नहीं होता। उन लोगों ने मुझे बल्लू बनाया, धोखे में फँसाया यह असंभव है।

कामिनी—यही तो भाई तुम्हारा सरल स्वभाव है। देखो,

आज समस्त वृन्दाबन के लोग इस बात की चर्चा कर रहे हैं। जहाँ देखो वहां निन्दा कर रहे हैं। इतना ही नहीं लम्बोदर महाराज ने यह बातें नन्दराज से भी कही है। वे सुनकर बहुत दुखी हैं।

अनय०—आह! कामिनी। आज तूने मेरे हृदय की आग को भड़का दिया। अच्छा होता कि तुम्हारे मुँह से इन शब्दों के श्रवण करने के पहले ही मेरी मृत्यु हो जाती? जिससे मेरे माथे पर यह कलंक-कालिमा कभी लगने न पाती।

कामिनी—भैया! यदि मेरी बातों से तुम्हें दुख होता हो तो लो मैं जाती हूँ, किन्तु फिर भी कहती जाती हूँ कि इस बात पर भली प्रकार विचार करो और जहां तक हो सके राधा को पतित होने से बचाओ; कुल में कलंक न लगाओ।

(कामिनी का जाना)

अनय०—(स्वगत) आह! इन असह्य यातनाओं की भयंकर ज्वाला में भस्म होने की अपेक्षा एकबारगीही आत्महत्या कर प्राण त्याग देना अधिक सुख कर है। यह अपना कलंकित मुख संसार में दिखाता फिरूँ इसकी अपेक्षा प्रज्वलित अग्निकाण्ड में कूद कर आत्मविसर्जन करना अधिक श्रेयष्कर है। आह! अब इस कठिन अग्निज्वाला से सुलगते हुए मेरे अन्तःकरण को शान्ति किस प्रकार मिलेगी? कहां जाऊँ? कैसे हृदय को शान्त बनाऊँ? मस्तक तप्त होकर एकही बात की स्मृति को उद्दीप्त कर रहा है। दृष्टि तरल होकर एकही दृश्य पर टकटकी लगाये किसी भयानक चित्र के देखने को उत्सुक हो रही है। राधिका भ्रष्ट है—कलंकिनी है, बस यही एक कातर पुकार चारों तरफ से सुनाई दे रही है। हैं! यह सामने कौन सुख पूर्वक सो रहा है? क्या राधा? कलंकिनी दुराचारणी अधम नार! पापों से लदी हुई पृथ्वी की भार! (कमर से छुरी निकाल) बस

इस छुरी की तेजधार इसे सदा के लिये गहरी नींद में सुला देगी। एकही वार में इसका रक्त पान कर सारे पापों का प्रायश्चित्त कर देगी ऐ राधा के शरीर में प्रवेश करने वाले शैतानों सावधान! तुमलोग कितना ही उसे अभेद्य कवच पहना कर उसका संरक्षण क्यों न करो, मेरा यह बाहुबल अवश्य उसे खंड २ कर देगा। (मारने के लिये छुरी उठाता है) (कामिनी आती है)

कामिनी—हैं हैं! यह कैसा अनर्थ! स्त्री हत्या! नारी हत्या!

अनय०—नहीं २ यह स्त्री नहीं जगत के लिये असहनीय भार है। यह हत्या नहीं इसके पापों का प्रतिशोध और पतित आत्मा का नरक से उद्धार है। चाहे इसके लिये लोग मुझे दुर्भाग्य से पुकारें, चाहे महाराजनन्द भी मुझे कष्ट दे २ कर मरवा डालें किन्तु मेरे हाथ से इसकी हत्या अनिवार्य है। इसके पापों का घड़ा भर गया। अतः इसका नष्ट होना ही उत्तम कार्य है।

कामिनी—भाई! क्या यही तुम्हारा पुरुषार्थ है। यही वीरत्व है? निष्प्रयोजन एक स्त्री के रक्त से अपना हाथ रंग रहे हो। ऐसा भयंकर दुष्कृत्य मन में ठान कर क्यों अपने कुल-देवताओं को कुपित कर रहे हो?

अनय०—नहीं, जारिणी स्त्री की हत्या से कुल-देवता कभी कुपित नहीं हो सकते। दुराचारिणी स्त्री से बिना स्त्री ही का होना अति उत्तम है। यह कलंकिनी है, असती है, क्या यह तुमने अभी मुझसे नहीं कहा है?

कामिनी—हाँ, कहा है तो मैंने ही। परन्तु इसका परिणाम यहाँ तक भयंकर रूप लायेगा, इसका मुझे स्वप्न में भी गुमान न था। तुम भाभी के माया की जाल में इस तरह फँस गये थे कि उसके दोषादोष के विचारने की शक्ति तक तुममें नहीं थी। क्या चन्द्रमा की बाहरी ज्योती से तुम्हारी आँखें ऐसी चौंधिया

गयी कि तुम उसमें पड़े हुए धब्बे को पहचान नहीं सकते ? तुम्हारी बंद आँखें खुल जाँय। उस पर पड़े हुए मोह के पर्दे हट जाँय इसी हेतु मैंने ये बातें तुमसे कही थीं। तुम उसे सीधे मार्ग पर ले आओ। उसके सुधार पर तुल जाओ। इसलिये ये बातें समझाई थीं।

अनय०—बस २ बहिन ! उन बातों को भूल जाओ। यदि तुम्हारी बात मान कर मैं इसकी हत्या से विलग हो जाऊँ तो मेरे अपमान की ध्वजा सदा संसार में फहराती रहेगी। मेरा इतना अपमान हो फिर भी मुझे अपने पुरुषत्व का अभिमान हो ? नहीं कदापि नहीं, मैं इसे मारूँगा ? अब अवश्य मारूँगा।

कामिनी—नहीं भाई ! तुम राधा को क्षमा प्रदान करो। मैं तुमसे उसके प्राणदान की भीख माँगती हूँ। यदि ऐसा ही विचार है तो पहले मुझे मार डालो, तब राधा की हत्या का शब्द मुँह से निकालो। (कामिनी राधा पर गिर पड़ती है। राधा जागती है)

राधा—हैं ! यह क्या ? अनयराज तुम !

अनय०—हाँ यह तेरी करणी का फल है।

राधा—परन्तु मेरा अपराध ?

अनय०—चुप, निर्लज्ज धूर्ता व्यभिचारिणी नारी ! अपराध पूछती है ? मुझे ठगने के लिये व्यभिचार का काजल लगा कर ऊपर से पवित्रता का दीपक दिखाती है ? एकवार अपने माया-जाल में फँसा ही चुकी, अब क्या फिर फँसाना चाहती है ?

राधा—आह ! प्राणेश्वर ! जिस मधुर मुख कमल के कोमल शब्दों ने मुझ पर अमृत वृष्टि की, वही श्रीमुख क्या आज अग्नि वर्षा कर रही है ? जिन कोमल हाथों ने मुझे प्रेम की थपकी देकर ब्रह्मानन्द का अनुपम सुख दिलाया था, वही क्या आज मुझे स्वर्ग का मार्ग दिखला रहा है ?

अनय०—नहीं, वरन् यह कह कि नरक का भयंकर द्वार तुझे अपनी ओर बुला रहा है। यद्यपि तेरी करुण पुकार से मेरा कठोर हृदय पिघल जाय और अपने पुण्य का प्रतिदान देकर तुझे स्वर्ग का मार्ग मैं दिखा दूँ तौभी उस महाद्वार के दिव्य द्वारपाल तेरा पापी मुख देखते ही तुझे नरक की भयंकर खाई में बिना गिराये कभी न छोड़ेंगे।

राधा—नहीं नाथ! जब सत्पुरुषों के सहवास से पापी जीवों का पाप जलकर भस्म हो जाता है, तब अनयराज के प्रेममय सहवास से और माधव की पवित्र भक्ति से क्या मुझमें अपवित्रता कभी वास कर सकती है?

अनय०—चुप दुष्टा! फिर भी मेरे सामने प्रत्यक्ष माधव की स्तुति गाती है। उसकी प्रशंसा सुनाकर मेरे हृदय में छुरी चुभाती है। तनिक भी नहीं शर्माती है। बस अब मैं तेरी कुछ भी बात सुनना नहीं चाहता। क्योंकि तेरे पतिताचरण ने मेरा और मेरे कुल का मुंह काला कर दिया। संसार में मैं मुख दिखाने योग्य नहीं रहा। चल मरने को तय्यार हो जा।

राधा—बहुत अच्छा नाथ! मैं तय्यार हूँ। आपके हाथों से मेरी मृत्यु होने से मैं भवबंधनों से छूट जाऊँगी। परलोक में पुनः आपकी प्रेमज्योति में तारिका होकर सुख पूर्वक जगमगाऊँगी। परन्तु नाथ! पहले अपना यह सुन्दर मुखकमल अच्छी तरह हृदय भर कर देख लेने दो। यह कलंकिनी राधा आपकी इस मनोहर मूर्ति का ध्यान करते २ सहर्ष प्राण त्याग करेगी। आपके एकनिष्ट प्रेम में जो राधा पागल हो गयी है, वह भला दूसरे पर पुरुष से प्रेम लगाकर कैसे भ्रष्ट हो सकती है? जिसके नेत्रों में आपकी भव्य मूर्ति सदा वास करती है, वह भला पर पुरुष का हाथ कैसे पकड़ सकती है? आपके उदार हृदय का

प्रम-पूर्ण सहवास को भूल कर वह दूसरे को अपने हृदय में कैसे स्थान दे सकती है ? किन्तु नहीं, यदि मुझे मार डालने से आप सन्तुष्ट हों, आपके हृदय का कष्ट दूर हो जाय, तो अब विलम्ब न लगाइये। मुझ अभागिनी को मार कर हृदय को तृप्त बनाइये।

अनय०—विषयवासना से प्राणी जब अन्धा हो जाता है तब उसे पाप-कल्पना कभी छू नहीं सकती। पापिनी ! तेरी इस चतुराई भरी बातों में आकर मैं फुसल जाऊँ और तुझे पवित्र समझ कर छोड़ दूँ ऐसा कभी हो नहीं सकता। संसार लय हो जाय, पृथ्वी रसातल को चली जाय, तौभी मेरे अटल कर्तव्य में बल नहीं आ सकता।

राधा—नाथ ! मैं अपने लिये नहीं वरन उसके लिये दुखित हूँ जिसकी मेरे पश्चात् बड़ी ही भयानक अवस्था हो जायगी। मेरे इन तुच्छ प्राणों की अपेक्षा उसकी कोमल आत्मा अधिक दुःख पायगी। मेरे मरने के बाद जब आपको यह ज्ञात हो जायगा कि राधा निरपराधिनी है उस समय आपको जो दुःख होगा वह दृश्य अभी से मेरी आंखों के सामने नाच रहा है। दुःख, प्रकोप से छाया हुआ आप के मुख पर का वह भीषण भाव मुझे आखें तरेर २ कर डरा रहा है। पश्चात्ताप की वेदना से कातर आपकी करुण-पुकार अभी से मेरे कानों को सुनाई दे रही है। इस लिये यह राधा जिसे आप कलंकिनी, व्यभिचारिणी के नाम से पुकारते हैं, प्राण त्यागने में हिचकिचा रही है।

कामिनी—भैया ! अब जो कुछ हुआ उसे जाने दो, कारण एक-बार कमान से छूटा हुआ तीर दुबारा लौट नहीं आता। काँचको हीरा बनाने से कभी हीरा बन नहीं जाता, बिगड़ी हुई आदत बनाई नहीं जाती, धूल चन्दन की जगह मस्तक पर शोभा नहीं पाती, इसलिये अपने हृदय को सँभालो और इसका सदा के लिये त्याग कर डालो।

अनय०—(विचार तंद्रा से जागकर) हाँ बस यही ठीक है। अच्छा, पापिनी ! जा, मेरे घर से निकल जा ! अपना काला मुँह फिर कभी मुझे न दिखा। मैंने तेरा आज से त्याग किया। वह हृदय जिसमें कभी तेरी प्रेमलता लहलहाती थी सदा के लिये काट कर फेंक दिया।

राधा—नहीं २ प्राणेश्वर ! मुझ अभागिनी को इस निठुरता से ठुकरा कर अपने चरण-कमलों से दूर न कीजिये। मुझे मार डालिये, किन्तु ऐसा कठोर दण्ड न दीजिए।

उड़ा दो सिर के टुकड़े चाम तक तन की ये खींचवालो।
जो चाहो जिस्म की बोटी तलक कुत्तों से नुचवा लो॥
पर अपने इन चरण कमलों से दासी को न ठुकराओ
कृपा की दृष्टि कर दो मन में कुछ तो अब दया लाओ॥

अनय०—नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, जा मेरे घर से निकल जा—और पश्चात्ताप की आग में जल २ कर अपनी देह को भस्मीभूत बना। जिससे एक भोले पति के साथ कपट व्यवहार करने का क्या परिणाम होता है, तुझे भली भाँति ज्ञात हो जाय, साथ ही फिर कभी कोई स्त्री ऐसा दुष्कर्म करने का मन में कभी साहस न लाये।

राधा—नाथ, मुझे क्षमा करो, ऐसी कठोर आज्ञा मेरे कानों को न सुनाओ, इन बँधे हुए हाथों और आँसुओं पर कुछ तो दया लाओ।

अनय०—बस, दूर हो पापिनी !

(अनयराज राधा को धक्का देकर खींचता है। राधा मूर्छित होकर गिर पड़ती है।)

लम्बोदर का मठ

लम्बो०—दुनिया में सब से सयाना कौन ? जो नाना प्रपंच फैलाकर दूसरों का पैसा ठगे और अपना पेट भरे। लम्बी टीका लगाना, दाढ़ी और जटा बढ़ा कर महात्मा का भेष बनाना, सुन्दर २ पटाकियों और चहकती हुई बुलबुलों को अपने मायाजाल में फँसाना फिर तो नित्य कचौड़ी और मालपूआ चाब २ सण्ड-मुसण्ड बन जाना। अरे भाई ! यदि इसका उदाहरण देखना हो तो मुझ लम्बोदर महाराज की महन्ताई को देख लीजिए। दो दिन पहले जिस लम्बोदर को खाने का ठिकाना न था, वह आज दूध और दही से भरे मटुकियों को पाँवों से लुढ़काता है। जिसको पहले चना भी चबाने को मयस्सर न था वह आज थाल के थाल मिष्ठान्न पकवान दिन में २४ वार चट कर जाता है। आज कल राजा नन्द भी मेरे शब्दों का ईश्वर का वाक्य मानते हैं। वृन्दावन के सारे गोप गोपाल भी मुझे आज साक्षात् शंकर का अवतार जानते हैं। जो गोपियाँ मुझसे सदा घृणा करती थीं, वही आज अपने पति के आज्ञानुसार मेरे चरण छूने को तरसती हैं और मुझसे वार्तालाप करने में अपना सौभाग्य समझती हैं।

(लछमन आता है)

क्यों लछमन ! बात क्या है जो इतना घबड़ाया हुआ दिखाई पड़ता है ? तेरी सूरत इतनी क्यों बदल गयी ? कुशल तो है ?

लछमन—क्या कहूँ गुरु जी ! जब आप की सूरत-शक्ल में अन्तर आ गया, तो फिर मेरी सूरत में क्यों न फर्क आये ! यदि चेला अपने गुरु का पूर्ण रूप से अनुकरण न कर सके, तो उसका शिष्य ही क्यों कहलाये ?

लम्बो०—सच है, जब गुरुजी ही बदल कर एक तुच्छ भिखारी से महन्त महाराज मठाधीश बन गये, तो चेला की सूरत क्यों न बदल जाय। गुरु गुड़ ही रहेंगे चेला अवश्य चीनी हो जायँगे। इसमें आश्चर्य ही क्या है। बेटा ! आजकल तेरे गुरु जी की इतनी महिमा बढ़ गयी है कि सभी उनका चरणामृत लेने को लालायित रहते हैं—मेरे कृपापात्र बनने के लिये आठों पहर तेरा मुँह जोहा करते हैं।

लछमन—गुरु जी ! जिस प्रकार एक झाड़ू से कूड़े करकट वाली धरती साफ हो जाती है उसी प्रकार उस अग्नि ने आप की वो लम्बी दाढ़ी, गुच्छेदार मोंछ और वह प्रचण्ड जटाभार जला कर आप को साक्षात् ईश्वर का अवतार बना दिया। आज कल आप के क्लेश के कारण वही दाढ़ी मोछें साढ़ेसाती शनिश्चर की भाँति आप के पीछे पड़ी थीं, परन्तु शंकर ने कृपा करके उन सबों को नन्दी के खाने की घास में शामिल कर दिया और आप को खासा नारायण का स्वरूप बना दिया।

लम्बो०—धन्य है बेटा ! यह देख कर मैं परम प्रसन्न हूँ कि तुम्हारी भक्ति मुझ पर पहले से दूनी हो रही है। और तुम मेरा काम होशियारी से नियत समय पर कर दिया करते हो।

लछमन—गुरु जी ! सच तो यह है कि मैं आप का पक्का चेला हूँ। और आपके समाधिस्थ होने पर आपकी गद्दी पर मुझे ही बैठना पड़ेगा, परन्तु मोंछ और दाढ़ियों से मुझे सदा घृणा रहने के कारण, आपके पीछे मुझे ही उसका अनुकरण करना

होगा—यह जान कर कभी २ मैं दुःखित होने से आपकी आज्ञा पालन करने में बिलम्ब कर दिया करता हूँ। परन्तु अब जब कि आप सफाचट मैदान हो गये तब आपकी भक्ति में मेरा मन दिन दूना और रात चौगुना लवलीन होता जाता है।

लम्बो०—बस, तो समझ लो कि मेरा हरेक काम तुम्हारे कल्याण के लिये ही होता है। मेरे पीछे इन दाढ़ी-मोंछों की सादे साती अवश्य कुछ दिनों तक लगी थी, किन्तु तुम्हारे लिये तो वह झगड़ा अब सदा के लिये मिट गया। अच्छा, यह बताओ जब तुम राजा नन्द के पास मेरा चरणामृत लेकर जाते हो तब वे भक्ति पूर्वक तुम्हारा आदर तो करते हैं न ?

लछमन—आदर क्या गुरुजी ! साक्षात् नारायण का चरणामृत समझ तीन बार आँखों से लगाते हैं और चलते समय मुझे कुछ दक्षिणा में धन भी दे दिया करते हैं ?

लम्बो०—परन्तु वह धन तो आज तक तुम मेरे पास नहीं लाये ?

लछमन—महाराज ! आप पूर्ण-विरक्त हैं। धन-दौलत से-निर्लिप्त हैं—द्रव्य को छूना भी पाप समझते हैं। भक्तों द्वारा सद् भाव से लाया हुआ नैवेद्य लोगों को प्रसाद रूप बाँट देते हैं। इत्यादि २ आप की प्रशंसा मैं लोगों के सामने कर दिया करता हूँ। तौभी आपकी कीर्ति अच्छी तरह प्रसिद्ध हो—इस कारण उन द्रव्यों में से कुछ घास मोल लेकर रास्ते में घूमने वाली गाय और बछियों को खिला दिया करता हूँ।

लम्बो०—चूल्हे में जाय तुम्हारे गाय बछिया और बैल ! खबरदार ! अब कल से समस्त धन मुझे ला कर दे दिया करना। अच्छा जाओ देखो, यदि भक्त-मंडली आ गयी हो, तो उन्हें सादर लिवा लाओ—जाओ देर न लगाओ।

लछमन—जो आज्ञा गुरुजी !

(लछमन चला जाता है)

लम्बो०—सच कहता है मेरी दाढ़ी मोंछें ही मुझे साढ़ेसाती शनिश्चर होकर लगी थीं। अब जो मैं भोले गोपगणों से कोई शब्द कहता हूँ, तो उसे बड़े भक्ति-भाव से सुनते हैं और पतियों के भय से गोपियाँ भी मेरी सेवा को आने लगी हैं। माधव की मुरली के बजने के साथ ही सम्पूर्ण वृन्दावन उसके पास एकत्रित हो जाता था और मेरा शंख-ध्वनि को कोई सुनता ही न था, किन्तु अब तो सब प्रबन्ध ठीक हो गया—अपना रंग भली भाँति इन भोले लोगों पर जम गया।

(गोपियाँ गोपों के साथ आती हैं, सब लम्बोदर को प्रणाम करते हैं। लम्बोदर स्त्रियों को पुष्ट पुत्र सौभाग्यवती भव, और गोपों को चिरंजीव रहो, कहता है।)

लम्बो०—क्यों मेरी भक्तमंडली ! तुम लोग सब कुशल से तो हो ? (एक गोप से) क्यों भाई प्रमोद ! तुम सपरिवार अच्छे तो हो ? भाई ! तुम्हारी स्त्री क्या है मानो साक्षात् स्वर्ग की अप्सरा है।

प्रमोद—महाराज के आशीर्वाद से सब कुशल ही कुशल है। परन्तु यह मेरी स्त्री आजकल बड़ी हठीली हो गयी है। अभी महाराज के दर्शनार्थ चलने के लिये जब मैंने कहा, तो आपकी मर्यादा में बड़े २ अपशब्द बकने लगी

लम्बो० कैसा अपशब्द ! जरा हमें भी तो सुनाना।

१ गोपी—मैंने कहा कि लम्बोदर असली ढोंगी है—भोंदू है, पाजी है और उसकी दृष्टि अत्यन्त दूषित है। खबरदार उसके पास कभी न जाना।

लम्बोदर—हरे ! हरे ! महात्मा की यह निन्दा ! यह मसखरी ताना ! परन्तु भाई प्रमोद ! तुम इसकी बातों को कुछ भी ध्यान में

न लाना। यह हमारी विरोधी भक्तिन है! क्यों तुम तो मुझे ऐसा नहीं समझते हो न?

प्रमोद—नहीं महाराज! कभी नहीं। मैं तो आपको परमात्मा का साक्षात् स्वरूप मानता हूँ। आपही को ब्रह्मा और आपही को विष्णु जानता हूँ।

१ गोपी—आग लगे ऐसे ब्रह्मा और ऐसे विष्णु को। मानो इस मूए की तरह हमारे पति भी एकदम अक्ल के दुश्मन हो गये हैं—न कुछ सुनते हैं न समझते हैं। जब देखो तब इसी ढोंगी की बातों में फंसे रहते हैं। आज व्यर्थ इस मूए के लिये मुझे दो चार धक्के भी सहने पड़े। परमात्मा! यह अन्याय हम कहाँ तक सहन करें! इन मूर्खों के साथ कब तक हम जरें मरें!

२ गोपी—सच है बहिन! इस निगोड़े के मारे हम लोगों का नाकों में दम है। यह मनुष्य है या साक्षात् नरक का जम है।

लम्बो०—(स्वगत) अच्छा अच्छा ओ मेरी नन्हीं जान! अभी लम्बोदर के रंग में अच्छी तरह रंगने नहीं पायी हो। जब उसके उपदेश मंत्र को भाँति समझ जाओगी तब तो आप ही तुम मेरे पास दौड़ी चली आओगी। (प्रगट) अच्छा मेरी भक्त मंडली! तुम लोगों की भक्ति देख मैं बहुत प्रसन्न हूँ। बस तुम लोग नित्य मेरा दर्शन किया करो और मेरा प्रसाद ग्रहण कर अपने लिए सीधे स्वर्ग का मार्ग निष्कंटक बनाया करो। (लछमन आता है) क्यों लछमन! क्या बात है?

लछमन—(धीरे से) बाहर माधव और नीलाम्बर आये हैं।

लम्बो०—अहा! शीघ्र जाकर कहो कि महाराज आपकी राह देख रहे हैं। देखता हूँ मेरे उपदेश का अवश्य कुछ लाभ हुआ है। तुम लोग ठीक तरह से बैठ जाओ (स्वगत) आज मेरा वैभव देखकर माधव अवश्य घबड़ा जायगा।

(माधव, नीलाम्बर और लछमन आते हैं।)

आओ, माधव ! आओ, इस आसन पर बैठ जाओ । कहो कैसे आना हुआ ? क्या नन्दराज ने तुम्हें इधर भेजा है ?

माधव—हाँ।

लम्बो०—तो तुम्हें यहाँ आने का कारण भी ज्ञात होगा ?

माधव—नहीं, केवल उन्होंने यही कहा कि महाराज का दर्शन कर आओ । इस कारण मैं यहां चला आया और आपके दर्शन से अति आनन्द पाया।

लम्बो०—तो लो मेरा दर्शन जी भर के कर लो। (आगे पाँव बढ़ा कर) रखो हमारे चरणों पर मस्तक।

माधव—ऐसा करने की इच्छा नहीं होती।

लम्बो०—क्यों ? इसका कारण ?

माधव—कारण यही कि जहाँ ईश्वरीय अंश हो वहीं मनुष्य को नमन करना चाहिये।

लम्बो०—माधव ! छोटा मुँह बड़ी बात बोल कर व्यर्थ मेरी निन्दा का पाप क्यों अपने सिर चढ़ा रहे हो ? अरे क्या तुम्हें नहीं मालूम कि सब लोग मुझे गुरु कह कर मानते हैं—मेरा आदर सम्मान करते हैं। सदा मेरी भक्ति में तन्मय रहते हैं। और मेरी सेवा करने ही में अपना जीवन सुफल जानते हैं। यही क्यों स्वयं तुम्हारे पिता राजा नन्द बिना मेरा चरणामृत ग्रहण किये भोजन तक नहीं करते हैं।

नीलाम्बर—ठीक है। अंधे की थाली में यदि श्रेष्ट पकवान कह कर सड़ा हुआ मांस का टुकड़ा रख दिया जाय. तो वह उसे ही खाने की इच्छा से उठायेगा। इस कारण यदि कोई अज्ञान तुम्हें महात्मा समझकर तुमसे प्रेम करते हैं, तो कौन सा दोष करते हैं ?

भले बुरे का ज्ञान नहीं सब अन्ध भक्त बन जाते हैं।

लम्बी टीका देख विचारे भरम गंवा कर आते हैं ॥

लम्बोदर—मूर्ख ! महाराज नन्द की निन्दा करता है ? तू जानता है कि ऐसा करने वाला मनुष्य राजद्रोहियों में गिना जाता है ।

माधव—किन्तु इसमें आपके कष्ट उठाने की कोई आवश्यकता नहीं है । ऐसे सत्यशील, सरल और प्रजावत्सल पिता पाने का मुझे ही सब से अधिक अभिमान है, इसलिये राजद्रोह किस पर लगाना चाहिए और किस पर नहीं इसका मुझे पूर्ण रूप से ज्ञान है ।

लम्बोदर—माधव ! तुम चाहे जितना ही क्रोधित क्यों न हो फिर भी मैं शान्त ही रहूँगा । कारण हमारे समान शान्तशील सत्पुरुष सदा आर्य-ऋषियों का अनुकरण करने ही में अपना सौभाग्य समझते हैं ।

माधव—आह ! अपने इस अपवित्र मुख से उन पवित्र ऋषियों का नामोच्चारण कर व्यर्थ उनके महत्व को न घटाइये उनकी महिमा की ओट में सत्य का ढोंग फैला कर व्यर्थ उनके दिव्य नाम को कलंक न लगाइये । वे वंदनीय परम पुरुष परमेश्वर स्वरूप से ज्ञात होने के लिये महान उग्र तपस्या करके तब कहीं उस ब्रह्मस्वरूप को प्राप्त हुए थे । लोगों का कल्याण हो, इसलिये जिन्होंने अपना ज्ञान-भण्डार संसार में लुटा दिया, उन परब्रह्म स्वरूप महात्मा के समान दाढ़ी-मूँछ और जटा बढ़ा कर क्या आप उनके श्रेष्ठ पद पर पहुँच सकते हैं ? इतना ध्यान रखिये, यह पेट का धन्धा बहुत दिन तक नहीं चल सकता । भाई ! तुम इन मूढ़ गोपालों को अपने झूठे पराक्रम की धूम, धर्म की बड़ाई सुना २ कर अपना भंडार भलेही भर लो । चाहे इन निर्बोध गोपियों द्वारा अपना चरण पुजवा लो, परन्तु एक दिन ऐसा अवश्य

आयेगा कि जब तुम्हारा सारा भंडा फूट जायेगा और सारे जगत में तुम्हारा मुँह काला हो जायेगा।

प्रमोद—तो क्या तुम यह कहना चाहते हो कि संसार में एक भी मनुष्य सत्पुरुष नहीं ?

माधव—मैं यह कब कहता हूँ कि संसार सत्पुरुषों से एकदम खाली है। नहीं, अभी भी आर्य-ऋषि की सन्तान बड़े २ अनमोल-रत्न गुदड़ी में छिपे हुए लाल की तरह जगत में वर्तमान हैं, किन्तु अपनी प्रतिष्ठा बनाने के लिये मठों और मंदिरों में गठाधीश के भेष में नहीं नजर आते हैं। वरन् बड़े २ पहाड़ों में, जंगलों में, गहन कंदराओं और गुफाओं में अपनी कमली में मस्त संसारी जीवों के कल्याणार्थ ईश्वराधीन हो समय बिताते हैं। उन्हें कोमल मखमली गदेलों पर सोने, बहुमूल्य रेशमी वस्त्रों के पहिनने और उत्तम २ पकवानों के भोजन करने की आवश्यकता नहीं। वे सुख-दुख सब अवस्था को एक समान मानते हैं। अपना वैभव बढ़ाकर द्रव्य कमाने के लिये नहीं, बल्कि संसार की उन्नति के लिये सदा कष्ट उठाना ही वे अपना कर्त्तव्य जानते हैं। भला उन महान् आत्माओं से इस तुच्छ अपदार्थ जीव की तुलना कर जो आदर करते हैं, वह आदर नहीं वरन् प्रत्यक्ष उन सत्य स्वरूप का निरादर करते हैं।

भला क्या फायदा है मूँछ औ दाढ़ी बढ़ाने से।
वृथा समझो मुलम्मा झूठ पर सच का चढ़ाने से॥
रँगा मन ही नहीं जब लाभ क्या कपड़े रँगाने से।
खरा सोना वही है जो चमक लाये तपाने से॥

लम्बो०—अच्छा भाई, जो तुम्हारे मन में आये सो बको भला कहो चाहे बुरा कहो। अरे नीलाम्बर ! इन पागलों के साथ रहकर तुम भी क्या पागल बन गये ?

माधव—जिसे तुम पागल समझते हो जरा उन पर अच्छी तरह दृष्टि डालो। देखो इनके पास कितनी सम्पत्ति और धन-रत्नों का भंडार भरा था, परन्तु उन सब को त्याग कर आज ये संसार की दृष्टि में पागल बने फिर रहे हैं। इनकी स्थिति पर पहुँचना कोई सामान्य खेल नहीं, कोल्हू में पेरते ही सहज में निकल जाय ये वो तेल नहीं अतः मेरे प्यारे भाइयो! इन बगुलाभक्तों से सावधान हो जाओ। इनकी बाहरी चाल और दिखाव पर भूल कर अपने को पाप की दलदल में न फँसाओ, क्योंकि हरेक मनुष्य साधु का भेष धारण करने और मूँड़ मुँड़ाने से ही साधु, महात्मा नहीं बन सकता। हर पदार्थ जो चमकता है—सोना नहीं हो सकता। हाँ, जटा बढ़ाकर मूँड़ मुँड़ाने की अपेक्षा वे अपनी दुख प्रकृति का मुण्डन कर डालें। शरीर में भस्म लगा कर झूठा आडम्बर दिखाने की अपेक्षा पहले अपनी विषयवासना को भस्म कर डालें। इस प्रकार ढोंग फैला कर लोगों को ठगने की अपेक्षा यदि उस जगदीश के चरणों में ध्यान लगायें, तो अवश्य ये भी उन महान् साधुओं के पद को पहुँच जायें।

लम्बो०—माधव! अभी तुम बालक हो, अज्ञान हो। माता के लाड़-प्यार से खराब हो गये हो, इस लिये मेरे सम्मुख ही तुम मेरी निन्दा कर रहे हो, किन्तु फिर भी ऐसा करना तुम्हें शोभा नहीं देता। इस समय तुम्हें कुछ उपदेश देना और कीचड़ में पत्थर फेंक कर अपने को खराब करना एक समान है। बच्चों को मुँह लगाना और मूर्खों को ज्ञान बताना महा अपमान है। इस लिये अधिक कुछ न कह कर यही कहना है कि अब तुम जाओ और स्त्रियों के झुण्ड में बंशी बजा कर आनन्द मनाओ।

माधव—ऐसे दुर्गन्धमयस्थान में इतनी देर खड़े होना भी अवश्य

किसी पूर्व-जन्मों के संचित पापों का फल है। यह मंदिर नहीं नरक-यातना-स्थल है। अच्छा नीलाम्बर, अब आओ चलो चलें।

नीला०—जो आज्ञा, परन्तु यदि आप अनुमति दें तो इस सफाचट वाली खोपड़ी पर झपताले की दो एक ताल लगा दूँ। शूलपाणि को रिझा लूँ?

माधव—नहीं जाने दो। यदि ये बुद्धिमान होंगे, तो आज ही से अपना आचरण बदल देंगे। लम्बोदर जी! आप भी सावधान हो जाइये। अपनी दुष्ट प्रकृति बदल कर जगत्पिता परमात्मा से नेह लगाइये।

नीला०—नहीं, तो याद रखिए कि इस सफाचट शिला के ऊपर वह पदत्राण रूपी नौका चल पड़ेगी कि जिससे मंदाकिनी श्रोणित धार में निकल कर आपके चेहरे को एकदम लाल बना देगी।

(दोनों जाते हैं)

प्रमोद—महाराज! आज तो माधव ने आप की बड़ी अप्रतिष्ठा की। मैं तो समझता था कहीं ऐसा न हो कि महाराज श्राप देकर उसे भस्म कर दें।

लम्बो०—नहीं भाई! श्राप देने से अपने जन्म, जन्मान्तरों का पुण्य-बल क्षय हो जाता है। इस कारण क्षमा दान ही हम साधुओं को शोभा देता है। यद्यपि उसने आज मेरा अपमान किया है, तौ भी यह बात मैं राजा नन्द से कदापि न कहूँगा।

प्रमोद—आप कहें चाहे न कहें, परन्तु मैं तो अवश्य कहूँगा। वह राजपुत्र है तो क्या हुआ। ओह! हमारे गुरू की यह निन्दा! त्राहि! त्राहि!

लम्बो०—अरे भाई! अज्ञानता न करो। संसार शान्ति रूप से ही चलता है। धीरे धीरे मथने से ही दूध से मक्खन निकलता

है। अच्छा, मेरे पूजन का अब समय हो गया। तुम लोग सब अपने अपने घर चले जाओ, काम काज में मन लगाओ।

(सब प्रणाम कर चले जाते हैं।)

आह! परमात्मा! आज क्या हो गया? मैंने विचारा था कि अपने भक्तों के सामने माधव की बेइज्जती करूँगा, उसे खूब रुलाऊँगा। किन्तु उसकी बोली सुनते ही मुझे कँपकँपी सी हो आयी। उसकी आँखों से आँसू निकलने की अपेक्षा मेरे ही शरीर से पसीना निकलने लगा। कुछ भी हो परन्तु किसी प्रकार से इस काँटे को अवश्य दूर करना चाहिये नहीं तो एक दिन ऐसा आवेगा कि सारी कलई खुल जायगी, सबके सब अपनी मान प्रतिष्ठा धूल में मिल जायगी।

गाना—

देकर झाँसा, फाँसा पट्टी सब को मूर्ख बनाऊँ।
इस काँटे को दूर भगा कर अपना रंग जमाऊँ॥
सीधा सादा भोला भाला, कैसा हूँ मैं आला।
आन बना कर, शान दिखा कर विषधर डँसने वाला॥
हे कर्तार, कर दे बेड़ा पार, जाय न खाली वार।
लछ०—गुरु गुरु ही रह गये, चेला चौपट दास।
मूँड़ मुँड़ा साधू भये, मिले नरक का वास॥

(गाते गाते दोनों का जाना।)

*

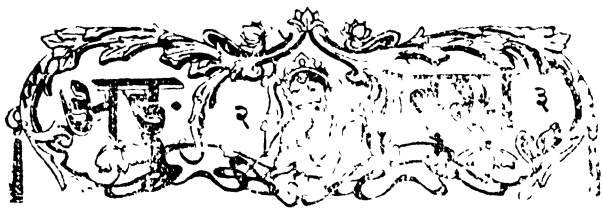

कुञ्जवन

(राधा का गाते हुए आना)

गाना

राधा - घट २ व्यापक हो तुम नाथ !
लाज रखो अबला दुखिया की,
दुख की घटा सिर पर घिरि आई,
थर थर काँपत गात । लाज०—

आह ! सच्चे प्रेम, सच्ची भक्ति-भावना और प्रेम-साधना का क्या यही परिणाम है ? एक अबला स्त्री की डबडबाई हुई आँखों से प्रवाहित प्रेमाश्रु, अशान्ति के दुख में उछलते और व स्थल पर पड़े हुए वस्त्रांचल को भिगो २ कर प्रेम की दुहाई दे रहे हैं, क्या प्रेम इसी का नाम है ? हाय ! आज पतिदेव ने मुझे कलंकिनी समझ घर के बाहर निकाल दिया । सदा के लिये मुझसे अपना मुँह फेर लिया । हाय ! आज इस कुंजवन की धवल वृक्ष-श्रेणियाँ मुझे अपने हृदयेश्वर की स्मृति दिला रही हैं । उनके सुख-दुख में सदा साथ देने वाली, उनकी देह के साथ सदा लिपटी रहने वाली ये प्रेममयी लता बेलियाँ मेरे दुर्दैव की कहानी सुन कर मुझ पर अश्रुवर्षा कर रही हैं । हे वन की लताओं ! तुम कितनी भाग्यशालिनी हो ! यह निष्ठुर मलय समीरण तुम्हारे सुख में बाधा उत्पन्न करने की इच्छा से बरबस तुम से रार मचा रहा है ।

बलात्कार तुम्हें पति-सहवास से दूर करने का व्यर्थ प्रयत्न कर रहा है। हे कुंजवन के दयालु वृक्षों! बताओ, बताओ राधा क्या कलंकिनी है? भ्रष्टाचारिणी है? हे पति-प्रेम-विह्वला लता-बेलियों! कहो कहो राधिका क्या अपराधिनी है, दुराचारिणी है? (राधा पर पुष्प वृष्टि होती है) देखो २ पवनदेव! ये वन की पवित्र कुसुम-कलिकायें मुझ पर फूल बर्षा कर मुझे निर्दोष प्रमाणित कर रही हैं। जाओ २ पवनदेव! मैं तुमसे प्रार्थना करती हूँ कि मेरे प्राण-नाथ के कर्ण-कुहरों में प्रवेश कर मेरी निर्दोषिता का संदेशा सुना आओ। हे मेघमंडल! जाओ, तुम भी वायु के साथ जाकर अपनी गम्भीर गर्जना से मेरे पतिदेव को इस बात का सबूत दे आओ कि राधा निष्कलंक है—निरपराधिनी है। तुम्हारी गर्जना सुनते ही वे मेरी ओर दौड़े आवेंगे। अपनी प्रेम-पुकार से इस कुंजवन को मुखरित बनावेंगे। दिव्य सुगन्धि से परिपूर्ण पुष्प-धाम महक रहा है। वन की लता, बेलियाँ झूम २ कर, फूल बर्सा रही हैं। भँवरे की गूंज कोयल की कूक, और पपीहे की पुकार से रस-धारायें बह रही हैं, किन्तु एक अन्धे को इनसे क्या सुख? एक भाग्यहीना स्त्री को जिसे पति ने सदा के लिये त्याग दिया हो—इन से क्या लाभ?

(राधा नेत्र मूँद लेती है, लम्बोदर आता है)

लम्बो०—जब से अनयराज ने राधा को घर से निकाल दिया तब से माधव के व्यभिचार का आरोप और भी मजबूत हो रहा है। किन्तु अब तो चिड़िया पिंजरे से उड़ कर कुंजवन की झाड़ियों में आ पड़ी है। इस कारण यह लावारिश स्त्री-धन अवश्य मेरे भंडार में सम्मिलित होगा। तभी मेरे मन को पूर्ण समाधान होगा। (सामने देखकर) हैं! यह कौन? राधा? वाहवाह! यह तो यहीं मिल गयी? वाह रे मैं और मेरा सौभाग्य! (पास जाकर)

राधा ! राधा ! यह तुम्हारी कैसी दशा ? जरा नेत्र खोलो ! कुछ मुंह से तो बोलो ।

राधा—मैं इस समय स्वप्नसुख में निमग्न हूँ । ऐसे समय मुझे कौन जगा रहा है ?

लम्बो०—राधा ! नेत्र खोलो । देखो, मैं तुम्हें अपने मन्दिर में ले जाने के लिये आया हूँ । चलो मेरे साथ चलो ।

राधा—महाराज ! मैं सुख में हूँ । भला तुम्हारे उस मन्दिर में मुझे कौन सा सुख प्राप्त होगा ?

लम्बो०—वहाँ तुम्हारी सब मनोकामनायें पूर्ण होंगी । मैं तुम पर अनुग्रह करूँगा—प्रेम पूर्वक तुम्हारा आदर करूँगा ।

राधा—मुझे किसी के आदर, अनुग्रह की आवश्यकता नहीं ।

लम्बो०—परन्तु माधव के अनुग्रह की तो आवश्यकता है ? लड़की ! तू जानती है कि मनुष्य कितना ही छिपाये किन्तु उसका असली रूप कभी छिप नहीं सकता । तेरे और माधव के विषय में समस्त वृन्दाबन के लोग क्या क्या कह रहे हैं क्या यह तूने नहीं सुना है ? यह सब लोगों का अपवाद तभी मिट सकता है जब मेरे मंदिर में जाकर आश्रय लेगी और मेरे इच्छानुसार कार्य करेगी ।

राधा—आपके कहने का तात्पर्य मैं नहीं समझी ।

लम्बो०—तात्पर्य यही कि इस नरजन्म में मनुष्य के हाथ से अनेकों निंदनीय पाप-कर्म हो जाते हैं, किन्तु ऐसे जीवों को उस पाप से मुक्ति दिलाने के लिए ही हम महात्माओं का अवतार हुआ है । राधा ! व्यभिचार के निन्दनीय-मार्ग का अवलम्बन करने के कारण तुम पर परमेश्वर का भयंकर कोप वज्र टूट पड़ा है । इस लिये मेरे मंदिर में चलकर देवताओं की सेवा करो । मैं अपनी उग्र तपस्या के बल से तुम्हारे सारे पापों का संहार करूँगा । यदि ऐसा न करोगी, तो मृत्यु के पश्चात् यम-

दूत तुम्हें नरक के भयंकर अग्निकुण्ड में ढकेलेंगे—खौलते हुए तेल की कड़ाही में रेलेंगे। अब बताओ दोनों में कौन अच्छा है ? मेरे साथ चल कर मंदिर में आनन्द पूर्वक रहना या नरक का भयंकर कष्ट सहना ?

राधा—मुझसे ऐसा कोई पाप कर्म हुआ ही नहीं, तो फिर परमेश्वर मुझे दण्ड क्यो देंगे ? मेरी माधव पर की अचल भक्ति और एकनिष्ठ पतिसेवा सारे पाप-तापों को जला कर भस्म करेगी, सारी यातनाओं को पल भर में हर लेगी।

लम्बोदर—राधा ! तू पतित है—बिल्कुल पतित है। अपने दुष्कर्मों के कारण तू आप ही स्वर्ग से नरक में गिर रही है। परन्तु जिस प्रकार विश्वामित्र ने अपने तपोबल से त्रिशंकू को स्वर्ग से गिरते हुए बीच ही में रोक लिया था उसी प्रकार मैंने भी तुम्हें रोक रखा है। अब तुम क्या कहती हो यही मुझे देखना है। परमेश्वर बड़ा न्यायी है, क्योंकि परमेश्वर ने आज मुझे जो दृष्टान्त दिया है उससे ज्ञात हुआ कि मेरा आधार टूटते ही तू एकदम नरक में गिर जायगी, फिर उस नरकवास से कभी निकलने न पायगी।

राधा—कैसा दृष्टान्त ?

लम्बो०—यही की गये तीन जन्म तक तुम मेरी धर्मपत्नी हुई थी किन्तु अपने उस पूर्वजन्म के पापाचरण के कारण इस जन्म मे तुम अनय की धर्मपत्नी हुई। किन्तु हम दोनों में पुनः सन्धि हो इस लिये परमेश्वर ने तुमको मेरे आधीन—

राधा—चुप चाण्डाल नारकीय पिशाच ! ऐसा कुवचन कहते तेरी जिह्वा गल नहीं जाती ? एक अबला स्त्री के साथ इस प्रकार दुर्व्यवहार करते तुझे लज्जा नहीं आती ?

लम्बो०—ह ह ह ! राधा ! तू अज्ञान है। अन्तरज्ञान से रहित है, यदि ऐसा न होता, तो मेरे सत्य वचन को कभी तू

मिथ्या न समझती ! अरे जिसने गत तीन जन्म तक तेरा पाणि-ग्रहण किया उसी को चाण्डाल कह कर पुकारती है—उस पर व्यर्थ का कलंक लगाती है ? राधा ! मूर्ख न बन, कहना मान जा और अपना कोमल करपल्लव मेरे हाथ में देकर मुझे आनन्दित बना ! आ मेरे गले से लग जा !

राधा—खबरदार चाण्डाल ! यदि मेरे शरीर पर हाथ लगायेगा, तो अभी जलकर भस्म हो जायगा। क्या तू यह समझता है कि तेरे इस नीच कर्म को देखनेवाला यहाँ कोई नहीं है ? परन्तु याद रख, वह विश्वपति माधव सर्वत्र विराजमान हैं। वह अवश्य तुझे दण्ड देंगे, इसका मुझे पूर्ण अभिमान है।

लम्बो०—अरे बावली ! अब माधव यहाँ मुझे दण्ड देने आवेगा, इसे तू एकदम भूल जा। इसका स्वप्न में भी ध्यान न ला। तुझसे पहले ही वह अपने दुष्कर्म के फल को प्राप्त हो चुका है।

राधा—वह क्या ?

लम्बो०—कालियाखोह में कूद कर प्राणत्यागने की व्यवस्था!

राधा—क्या माधव को कालियाखोह में ढकेलने का प्राणदण्ड ?

लम्बो०—हाँ, राजा नन्द बड़े न्यायी हैं। वैसा ही मेरा चक्र भी अचूक है। अतः अब बताओ, यदि तुम्हारा माधव पर अटल प्रेम हो तो मेरा कहना स्वीकार करो। मैं राजा नन्द से कह कर उसका प्राण बचाऊँगा किसी प्रकार की भी आँच उसे लगने न दूँगा।

राधा—मूर्ख ! तू तो क्या संसार की सारी शक्तियाँ एकत्रित होकर उसके विरुद्ध खड़ी हो जायँ, तो भी उसका एक भी बाल बाँका न कर पायें। माधव परमेश्वरी अवतार है। परमेश्वरी अवतार से छल करनेवालों पर अवश्य ईश्वर का कोप होता है। जिससे अन्त में वह हाथ मल २ कर रोता है।

लम्बो०—अहा हा ! क्या नाराज हो गयी ? पूर्व जन्म में भी तू इसी तरह मुझसे नाराज हुआ करती थी। किन्तु उस क्रोध के समय भी तुम्हारा मुख-मंडल ऐसा मालूम होता था मानो पंच हथियारों के साथ रतिदेवी कामदेव को विजय करने के लिये ललकार रही है। अतः निश्चय जानो कि तुम्हारे क्रोध से मेरी प्रेमाग्नि और भी अधिक धधक उठती है।

राधा—बस २ चाण्डाल ! अपनी जिह्वा संभाल ! वरना अभी भस्म हो जायगा तत्काल !

लम्बो०—क्या मेरा कहना स्वीकार न करेगी ?

राधा—कदापि नहीं ! राधा मर जायगी, किन्तु तेरी इन जहर भरी बातों पर कभी कान न धरेगी।

लम्बो०—राधा ! मैं फिर भी कहता हूँ कि ऐसी अज्ञानता न करो। माधव के साथ २ अपनी इस सुन्दर देह का बलिदान न होने दो। इस लिये यदि राजा नन्द की कोपाग्नि से बचना चाहती हो तो मेरे साथ निर्भय होकर चली आओ और आनन्द से देवसेवा में मन लगाओ।

राधा—मूर्ख, मुझे अपने इस पार्थिव शरीर की चिन्ता नहीं, मेरी आत्मा माधव की विमल भक्ति से परिपूर्ण है। तेरे पाप पूर्ण मन्दिर में जाकर तेरी नीच सेवकाई करने की अपेक्षा इसी भयंकर जंगल में प्राण त्याग करना अधिक सुखकर है। राजा नन्द का क्रोध मुझ पर चाहे कितना ही अग्नि वर्षा करे मुझे उसका कुछ भी भय नहीं, यदि उनके प्रेमपूर्ण करों से मैं कालियाखोह में ढकेली गई तो उनका बड़ा उपकार मानूँगी, अपना जन्म सुफल जानूँगी।

लम्बो०—तो मालूम हुआ कि तू सीधी तरह कहना न मानेगी। अपना हठ न छोड़ेगी। (राधा का हाथ पकड़ने को आगे बढ़ता है राधा चिल्ला कर पीछे हटती है)।

राधा—माधव ! बचाओ, आओ आओ शीघ्र आओ !

(नेपथ्य में) राधा ! मैं आया २ न घबड़ाओ ।

(लम्बोदर माधव का कंठस्वर सुन कर भाग जाता है)

राधा—(नेत्र खोल कर) आह ! माधव ! माधव ! तुम्हारे अनन्त उपकारों के भार से मेरा सिर दबा जा रहा है । तुम्हारी असीम दया का दिव्यभाव मेरे रोम २ में छा रहा है । बताओ, मैं तुहारे इन उपकारों का किस प्रकार बदला दे सकती हूँ । शरीर पतिदेव को दे चुकी । मन था वह पहले ही तुम्हें अर्पण किया । आँखें थीं, वह तुम्हारे ही ध्यान में मग्न हैं । कामनायें तुम्हीं में लय हो चुकी हैं । अब भला मेरे पास रखा ही क्या है जिसे देकर मैं तुम्हें प्रसन्न करूँ । सबों ने मुझे त्यागा, परन्तु तुमने मेरा त्याग नहीं किया ! मेरी करुण पुकार सुनी और इस नरपिशाच के चंगुल से मुझे छुड़ाया इस ब्रह्माण्ड में जिधर देखती हूँ तुम्हीं तुम दिखाई दे रहे हो। वृक्ष, शाखाओं में, लता, बेलियों में, आकाश मण्डल में, नदी-नालों में जल-थल में, सर्वत्र तुम्हारा ही सुन्दर स्वरूप जगमगा रहा है । दयालु ! तुम बड़े दयालु हो । तुम्हारी कृपा की कोई थाह नहीं । तुम्हारी भक्ति के अतिरिक्त संसार में अब मुझे और किसी की भी चाह नहीं ।

*

लम्बोदर का मठ

(लछमन आता है)

लछ०—वाह भाई ! बिल्ली की आँखें चूहे पर ! सूम का मन द्रव्यों पर—नौजवानों का दिल अपनी प्रेमिकाओं पर। उसी प्रकार हमारे गुरु महाराज का हृदय भी नई नवेली गोपियों पर—क्या हर्ज है गुरु की सेवकाई से कुछ न कुछ प्रसाद तो मिलही जायगा, जहाँ कोई रूपवती स्त्रियों को देखते हैं कि गुरुजी के मुँह से लार टपक पड़ती है। इधर छम की आवाज आई कि उधर गुरुजी के मुँह से निकली हाई ! आजकल गुरुजी राधिका के पीछे बेतरह पड़ गये हैं उसे मुट्ठी में करने के लिये जी जान से अड़ गये हैं, लेकिन वह कब भला इनके हत्थे में चढ़नेवाली ! इनके हिस्से में तो वही आती हैं जो हैं बिल्कुल नकटी काली, भैंसासुर की साली, किन्तु गुरु महाराज तो अभी भी नहीं जागे हैं। इतना दिन चढ़ आया अभी भी रजाई से पाँव बाहर नहीं निकाले हैं। अब इन्हें जरा जगाऊँ-खूब हड़कम्प मचाऊ। ओ गुरुजी ! गुरुजी ! कहाँ हैं आप ! आइये जल्द आइये। आपकी भक्त मंडली न मालूम कब से आपकी राह देख रही है और आप अभी तक नींद की खुमारी ही में पड़े आनन्द ले रहे हैं।

(लम्बोदर का आँखें मलते हुए भीतर से आना)

लम्बोदर -अरे क्या है रे घनचक्कर दास ! क्या है जो इतना

चिल्ला कर सिर खा रहा है ? व्यर्थ क्यों सबेरे ही सबेरे हल्ला मचा रहा है ?

लछ०—वाह गुरुजी अच्छी कही ! मैं हल्ला मचा रहा हूँ या आपकी प्रातस्तुति गाकर, भोरही का राग अलाप कर आपको जागृत कर रहा हूँ वह देखिये ! आपके भक्तगण कब से आपके लिये अकुला रहे हैं। मैंने तो आपको इतनी मेहनत से जगाया और आपने उल्टे मुझको सिर खाने का कलंक लगाया !

लम्बोदर—अच्छा २ जा ! बहुत बक २ न मचा। शीघ्र बिछावन लाकर यहाँ बिछा, क्योंकि आज यहाँ एक बड़ी भारी सभा होनेवाली है। मैं हाथ-मुँह धोकर आता हूँ तब और धंधा तुझे बताता हूँ।

लछ०—अरे गुरुजी ! सभा कैसी और भाषण कैसा ?

लम्बो० —अरे भाषण का विषय वही होगा जो हमेशा रहा करता है—याने विषय-वासना। जिस माधव के बुरे आचारों से प्रजा इस समय दुखित हो रही है, उसी सम्बन्ध में उन्हें भड़काना और जहाँ तक हो सके उसमें से निकली हुई आग से माधव तक को भस्मीभूत कराना। देखना आज वह भयंकर व्याख्यान होगा कि तू तो यही समझेगा दैत्यसंहार के लिये विद्यावाचस्पति स्वयं देवताओं में संजीवनी बीज सी उत्पन्न कर रहे हैं। आज के मेरे भाषण में जिनकी प्रशंसा होगी वे सदा के लिये अजर अमर हो जायँगे। और जिनपर से मैं कृपादृष्टि फेर लूँगा वे वहीं तत्काल जलकर भस्म हो जायँगे।

लछ०—तो महाराज ! मेरी तरफ कृपा करके अपना श्राप द्वार न खोलियेगा। मुझे ही यमराज के पलड़े में न तौलियेगा।

लम्बो०—अरे नहीं २ तू न घबड़ा ! शीघ्र बिछावन गहा

लाकर बिछा। अच्छा, अब चुप हो जा! देख सामने से वे ही सब लोग चले आ रहे हैं। अब ठीक होकर बैठ जा।

(प्रमोद और प्रकीर्ण आते हैं और प्रणाम करके बैठ जाते हैं)

लम्बो०—कल्याण हो! कल्याण हो!!

प्रमोद—महाराज! माधव के दुर्व्यवहार का विष सबों पर अपना असर फैला रहा है। कल रात को सेनापति अनयराज ने राधा को घर से बाहर निकाल दिया।

लम्बो०—अरे! यह तुम क्या कह रहे हो? पागल तो नहीं होगये हो?

प्रमोद—महाराज! आप त्रिकालदर्शी होकर भी क्यों व्यर्थ अनजान बन रहे हैं?

लम्बो०—सचमुच मुझे वह समाचार ज्ञात नहीं था, किन्तु अब जब तुमने आकर हमसे कह दिया, तो मैंने भी नेत्र मूँद कर ध्यानदृष्टि से उस रहस्य को जान लिया।

प्रमोद अहा! निस्संदेह हम बड़े ही भाग्यशाली हैं जो कि आपकी सेवा का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ

लम्बो०—देखो प्रमोद! तुम्हारी हम पर एकनिष्ठ भक्ति देख-कर मैं बहुत प्रसन्न होता हूँ, इसलिये पूर्व जन्म का कुछ वृत्तान्त सुनाकर तुम्हारे मन के सन्देह को दूर कर देना चाहता हूँ। निश्चय जानो कि पूर्वजन्म का सम्बन्ध ही सदा सर्वदा चला आता है। तुम्हें वही गुप्त-रहस्य सुनाता हूँ—सुनो तुम्हारी स्त्री गत तीन जन्म तक मेरी धर्मपत्नी बनी थी। इस जन्म में वह तुमसे ब्याही गयी है, परन्तु मुझ पर उसकी अभी भी पूर्ण निष्ठा है। यद्यपि वह हमारी विरोध-भक्ति करती है तथापि वह शास्त्र सम्मत है असम्मत नहीं।

(नीलाम्बर आते हैं)

नीला०—क्यों नहीं ! बहुत ठीक है। तब तो मेरी और तुम्हारी भक्ति भी शास्त्र सम्मत ही होना चाहिए। अरे नरक के कीड़े ! अभी तुम न मालूम और कितने ही जन्मों तक कीड़े के कीड़े होकर धूल में लोटते रहोगे

लम्बो०— (स्वगत) अरर ! कहाँ से आई यह बला ? आज मेरे प्रपंच में अवश्य यह गड़बड़ घोटाला करेगा। (प्रगट) कहो कैसे आये ?

नीला०—तुम्हारे बुलाने से, और कैसे ? क्यों आज तो तुम्हें माधव के विरुद्ध विवाद खड़ा करना है न ?

लम्बो०—अरे विवाद किस बात का ?

नीला०—हमारी स्त्रियों को भ्रष्ट किया, हमारे धन पर डाका डाला और हमें पागल बनाकर हमारे आसपास फेरा लगाया—इस बात का।

प्रमोद—अरे नीलाम्बर ! माधव ने क्या तुम्हारी ऐसी दशा कर डाली ! महाराज ! सुना आपने ? अब इस पागल को भी ज्ञान हो रहा है। इसके नेत्र खुल गये !

नीला०—किन्तु शोक ! तुम्हारे नेत्र सदा के लिये बन्द हो गये हैं ? तुम्हारे होशो हवास खो गये हैं। इसी से इस साँड़ को वे लोग अपने लगाये हुए खेत में चरने को छोड़ दिया है।

प्रमोद—अरे नीलाम्बर ! न घबड़ा। आज इसे नाथ पहनाकर हल में जोत दिया जायगा।

नीला०—अच्छा, तो लो मैंने पकड़ा, पहनाओ नाथ।

(लम्बोदर का गला पकड़ कर नीचे गिराता है)

लम्बो०—हाय ! हाय ! मार डाला रे मार डाला ! चाण्डाल को मृत्यु भी नहीं आती ! अरे प्रमोद ! प्रकीर्ण ! क्या देखते हो !

बचाओ, इस माधव के रीछ से शीघ्र बचाओ। नहीं तो यह मुझे मार डालेगा। मुझ पर ही माधव का सारा कसर निकाल लेगा।

प्रमोद—अरे दुष्ट! हमारे गुरु महाराज पर हमला करता है। अरे महाराज से बोला भी नहीं जाता है। चलो इस पागल को राजदूतों के हवाले करें अरे लछमन! यह पागल महाराज को पीट रहा है और तू खड़ा खड़ा देख रहा है?

लछ०—(स्वगत) तो क्या मैं भी इनके साथ साथ मार खाऊँ या श्मशान को चला जाऊँ। (प्रगट) अच्छा अच्छा भाई! तुम इसे पकड़ कर पागलखान ले जाने का बन्दोबस्त करो मैं महाराज को पालकी में डाल कर.....

नीला —हाँ हाँ, ठीक है। जल्द अपने गुरु महाराज के लिये अर्थी सजाओ मैं भी श्मशान तक साथ दूँगा। इनका जलप्रवाह करूँगा।

प्रमोद—चुप बदमाश! चल हमारे साथ।

(प्रमोद और प्रकीर्ण नीलाम्बर को खींचते हुए ले जाते हैं)

लछमन—महाराज! अब तबीयत कैसी है। क्या थोड़ी सी हल्दी पीस कर बदन में लगा दूँ या नारायनी तेल की मालिश कर दूँ?

लम्बो०—नहीं नहीं, चोट कुछ अधिक नहीं आयी है. पर दुष्ट ने घूँसे मार मार कर मुझे अधमरा कर दिया। आह।

गाना

देखो भाई इस पागल ने मेरी हड्डी तोड़ी।
मार मार कर कमर तोड़ कर तभी दुष्ट ने छोड़ी॥
माधव का ये लगुआ बगुआ है पूरा जमकाल!
जगदीश करें इन दोनों का अब नाश हो जाये तत्काल॥

(जाते जाते लछमन लम्बोदर को टेका कर ले जाता है)

कालियाखोह

(प्रमोद और प्रकीर्ण बातें करते हुए आते हैं)

प्रमोद—भाई प्रकीर्ण! आखिर हमलोगों की बात रह गयी। हम विजयी हो गये। पहले जिस समय राजा नन्द के पास हम माधव की शिकायत करते थे उस समय महाराज हम पर ही गुर्राते थे, आंखें दिखाते थे।

प्रकीर्ण—भाई! यह सब तो हमारे गुरुमहाराज की बातों का प्रभाव है, जिससे महाराज की बन्द आंखें खुल गयीं न्याय के देवता जागृत हो गये। आप से आप सब प्रमाण एकत्रित हो गये।

प्रमोद—मजा यह कि जब पूछा गया तब माधव एक शब्द भी बोल न सका। अजी बोलता कैसे? उसकी तो बोलती ही बन्द हो गयी थी।

प्रकीर्ण—सेनापति अनयराज ने माधव के दुराचरण के कारण राधा को घर के बाहर निकाल दिया। पूछताछ के समय जिस प्रकार मनुष्य नींद से चौंक उठता है उसी प्रकार चौंक कर माधव ने स्वीकार किया कि "हाँ, राधा! मत घबराओ, मैं आया। मैंने अवश्य कहा था।" यह सुनते ही राजा इतने क्रोधित हुए कि माधव को उसी समय कालियाखोह में ढकेलने की आज्ञा देदी।

प्रमोद—देखो ये दोनो राजप्रहरी माधव को कालियाखोह की ओर लिये जा रहे हैं।

(दो प्रहरियों का माधव को मुश्कें बांधे हुए ले जाना)

प० प्रह०—(मुनादी बजाकर) ऐ वृन्दावन के समस्त प्रजागणों! महाराज नन्द का यह एकमात्र पुत्र दुरात्मा माधव अपने व्यभिचारादि दुराचरणों से समस्त प्रजा को भयपीडित कर रहा था। इस कारण नन्दराज ने अपनी प्रखर न्याय बुद्धि का अवलम्बन कर उसे आज कालियाखोह में ढकेलने की आज्ञा दी है। इस कारण दो प्रहर को आज कालियाखोह के तट पर, माधव को जल समाधि देने के समय सब लोग उपस्थित रहें।

प्रमोद—देखा प्रकीर्ण! आखिर अपने वंश का ही नाश कर लिया न? ईश्वर क्या कभी अन्याय कर सकता है? (पास जाकर) क्यों माधव! कैसे हो, क्या हाल है?

प्रकीर्ण—अरे भाई! ये हाल पूछने का समय नहीं। वह देखो, यशोदा रानी किस प्रकार पुत्रशोक में व्याकुल पागल सरीखी माधव की ओर झपटी चली जा रही हैं। आखिर माता की ममता ठहरी! क्या कभी पुत्रस्नेह को त्याग सकती है?

(यशोदा झपटती हुई आती हैं और माधव को गले लगाती है)

यशोदा - माधव! माधव! बोलते क्यों नहीं? चुप क्यों हो? क्या अपनी इस हतभागिनी माता से नाराज हो गये? मातृस्नेह को क्या भूल गये? महाराज तुम पर क्रोधित हुए, परन्तु माता पुत्र पर कभी नाराज नहीं हो सकती। देखो माता का प्रेम शतधारा में उमड़ २ कर पुत्र की बलैया लेने को व्याकुल हो रहा है। जन्मदात्री माता के हृदय में पुत्र के प्रति कठोरता का कभी वास नहीं हो सकता। माता का स्नेह वह दृढ़ बन्धन है कि संसार की कोई

भी शक्ति, कोई भी ताकत उसे तोड़ नहीं सकती। संसार भले ही चाहे त्याग दे, पर माता कभी पुत्र को छोड़ नहीं सकती।

(नन्दराज का प्रवेश)

नन्द- किन्तु तुम्हें ऐसा करना होगा। कर्तव्य के लिये न्याय के लिये पुत्रप्रेम से तुम्हें अवश्य मुंह मोड़ना। होगा रानी, रानी क्या पुत्र प्रेम में बावली हो गई! मैंने तुम्हें राजमंदिर से बाहर पांव न निकालने की आज्ञा दी थी। चलो, मेरे साथ महल को लौट चलो।

यशा नाथ! जिस प्रकार मणि खोकर सर्प जीवित नहीं रह सकता है, बिना चन्द्रमा को देखे, चकोर जीवन धारण नहीं कर सकता है उसी प्रकार हृदय का धन, नैनों का तारा, जीवन का सहारा दुलारा, प्यारे पुत्र को खोकर क्या स्नेहमयी माता कभी जीवित रह सकती है? नेत्र व्यर्थ हैं यदि वह ज्योति हीन हों। रात्रि शोभाहीन है यदि उसमें चन्द्रमा का प्रकाश न हो वह संसार, वह गृह माता के लिये एकदम शून्य और अन्धकारमय है जो पुत्ररूपी दिव्यज्योति से आलोकित न हो। वह घर ही शोभाहीन है जो हंसता हुआ पुत्र के मुखकमल से सुशोभित न हो। अत महाराज! माधव के बिना समस्त राजमहल मुझे शून्य श्मशान सा प्रतीत हो रहा है। माधव के प्राणों के साथ - मेरा भी प्राणपक्षी निर्वाण को प्राप्त हो रहा है। माधव हम लोगों का प्राण है, नेत्रों की ज्योति है, फिर उसे ऐसा कठोर दण्ड क्यों दे रहे हैं? भला प्राण को प्राणों से क्यों अलग कर रहे हैं?

नन्द—प्रिये! तुम जानती हो कि न्याय देवता का शुद्ध स्वरूप सदा स्थिर रहे—नीति और धर्म की धवल ध्वजा सदा संसार में फहराती रहे, इसलिये न्याय आसन पर बैठने पर पिता-पुत्र, माता

भगिनी, भ्राता-सखा आदि के स्नेहमय बन्धन टूट जाते हैं। ऐसे समय पुत्रप्रेम का स्मरण होते ही न्यायमूर्ति की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। कर्तव्य के आगे प्रिय से प्रिय सम्बन्धियों का त्याग स्वीकार करना पड़ता है। राजा होकर यदि इस नीति का अवलम्बन न करें, तो राजा के नाम को कलंक लगता है। इस कारण राजा नन्द का न्यायबुद्धि प्रत्यक्ष अपने पुत्र के सम्बन्ध में भी कितनी प्रखर है यह प्रजा को अवश्य दिखाना चाहिए।

यशोदा तो बस ज्ञात हुआ कि संसार में लोगों के झूठे कलंक को सत्य प्रमाणित करने के लिये ही आप पुत्रप्रेम पर कुठार चला रहे हैं। क्या अपनी न्यायमूर्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण प्रजा को देने के लिये ही आप ऐसी निष्ठुरता मन में धारण कर रहे हैं? यदि ऐसा है तो आपके उस न्याय-देवता का धिक्कार है। ऐसी नीति को धिक्कार है। अच्छा होगा आप माधव के साथ ही न्याय देवता को भी जलसमाधि दीजिए। राजमहल का परित्याग कर अरण्यवास स्वीकार कीजिए।

माधव—माता.....

यशो०—कहो २ पुत्र! तुम मुझसे जो कुछ कहना चाहो कहो। ये तुम्हें दोषी ठहराते हैं। परन्तु मैं तुम्हें निर्दोष और पाप रहित समझती हूँ। नाथ, जब माधव बालक था उस समय यदि मैं उसे मारती-पीटती थी, तो आप मुझसे नाराज हो जाते थे। उसका पक्ष लेकर मुझे भला-बुरा सुनाते थे, परन्तु अब इस समय आपका वह अपार पुत्रप्रेम कहां लुप्त हो गया? उस समय एक-क्षण के लिये भी अपने से उसे अलग करने में आपको महान कष्ट होता था। अब उसी को क्यों निर्दयता के साथ मृत्यु-मुंह में ढकेल रहे हैं? जिस मुखसे उसका नित्य चुम्बन लेते थे उसी मुख

से उस पर अग्निवर्षा कर रहे हैं ? जिसे प्रेम से सदा गोदी खेलाते थे उसी का जीवन नाश करने में अब कर्तव्य समझ रहे हैं ?

माधव—मातेश्वरी ! मेरे वियोग-भय से महाराज पहले ही घबरा गये हैं। उस पर उन्हें और भी अपने भाषण से क्यों व्यर्थ दुखी कर रही हो ? यदि तुम इस प्रकार अशान्ति धारण करोगी तो जलसमाधि लेते समय भला मैं कैसे शान्त रह सकता हूँ। यदि तुम इस तरह अधीर होगी, तो मैं कैसे तुम्हारा वियोग सह सकता हूँ।

यशोदा—वत्स ! उस भयंकर खोह में तुम्हारी क्या दुर्दशा होगी। इसे स्मरण कर भी माता का हृदय शान्ति धारण कर सकता है ? हाय ! वह भीषण विषधर सर्प तुम्हारे कोमल शरीर को टुकड़े २ कर डालेगा, इसको क्या माता सहन कर सकती है ?

माधव—शान्त मातेश्वरी ! शान्त ! मैं कौन और कैसा हूँ यह तुम्हें भलीभाँति ज्ञात है। मेरी बाल-लीलाओं का स्मरण करो। मेरे बाल-स्वरूप को हृदय में अंकित कर उस पर अच्छी तरह नजर डालो। तुम मुझे प्रेमपूर्वक मीठे २ पदार्थ खाने को देती थी, परन्तु मैं दुर्गुणी तुम्हारी दृष्टि चुरा कर चुटकी भर २ मिट्टी खा लेता था। माता ! उस प्रसंग का मन में स्मरण करो। और धैर्य धारण करो। कर्तव्य के आगे पुत्रप्रेम को दूर हटाओ और शान्त हो जाओ।

नन्द—अरे कलमुँहा ! अब कैसे बोल रहा है ? भरी राज-सभा में तो तेरी एकदम बोली ही बन्द होगयी थी। क्यों बोल, कपटी दुराचारी ! चुप बैठा क्या देख रहा है ?

यशोदा—महाराज ! माधव पर व्यर्थ क्यों क्रोधित हो रहे हैं ? वह आपकी ओर देखेगा, अवश्य देखेगा, उसकी दिव्यदृष्टि से आपके पाषाण रूपी हृदय-पट पर उसकी प्रेममयी मूर्ति प्रकट

हो आयेगी उसकी प्रेमधारा उमड़ कर आपके अन्तःकरण को द्रवीभूत बनायेगी।

नन्द—बालक कितना ही कुरूप हो, परन्तु माता की अन्ध-दृष्टि में वह सदा सुरूप ही दिखाई देता है। पुत्र कितना ही दुराचारी दुर्गुणी हो, किन्तु माता का अन्ध-प्रेम उसे सदा सदाचारी और सद्गुणी ही समझता है? किन्तु मैं अपनी आंख को इस प्रकार अन्धी क्यों बना सकता हूँ। पुत्र-प्रेम के वशीभूत हो मैं उसके दुर्गुणों पर कैसे पर्दा डाल सकता हूँ!

यशोदा—नाथ! क्षमा कीजिए, परन्तु मेरी नहीं वरन आपकी ही दृष्टि अंधी हो गई है—सत्यासत्य के परखने की शक्ति आपमें नहीं है। यदि आप सूक्ष्म दृष्टि विकार रहित होकर माधव की ओर दृष्टि डालेंगे, तो अवश्य उसका परमेश्वरी रूप आप देख पायेंगे।

नन्द—क्या इस नररूपी राक्षस को मैं परमेश्वर का अवतार समझूँ? एक दुराचारी पिशाच को ईश्वर का अंश जानूँ? ईश्वर प्रजा का दुःख हरण करता है या कि उल्टे उन्हें पीड़ित कर उनपर अत्याचार का बादल बर्साता है? इसके जन्म दिन से ही मेरे राज्य पर संकटों की भरमार है। जिधर देखो उधर ही प्रजागण की कातर पुकार है, किन्तु गुरु महाराज की कृपा से अब सर्वत्र शान्ति का विधान हुआ है! गुरु महाराज प्रत्यक्ष शंकर के अवतार हैं। उनकी इस नराधम ने अवहेलना की। इतना ही नहीं, गाँव के पागलों को बहकाकर गुरु महाराज पर हमला करने में भी इसने कमी न की। इस कारण, जब तक इसका देहान्त न होगा, मेरे राज्य में जो प्रलय मच रहा है, कभी शान्त न होगा। वधिकों! ढकेलो २ इस राक्षस को कालियाखोह में ढकेल दो।

यशोदा—नहीं २ नाथ! ऐसा पागलपन न कीजिए। माधव

को इस भयंकर कालीयादह में ढकेल देने की कठोर आज्ञा न दीजिए, क्योंकि माधव के डूबते ही समस्त विश्व डूब जायगा। चारों तरफ अन्धकार छा जायगा—ब्रह्माण्ड लय हो जायगा।

नन्द—अभी ब्रह्माण्ड के लय होने में देर है, किन्तु आज माधव के साथ २ समस्त पापियों का इस कालियाग्वोह में लय हो जायगा।

माधव—माता! व्यर्थ क्यों महाराज को अपनी प्रार्थना की ठोकर से या पीड़ित कर रही हो? देखो, मेरे मुख की ओर देखो। उस पर तुम्हें क्या दुःख की लेशमात्र भी छटा दीख पड़ती है? बस शान्त होकर परमेश्वर का मन में चिन्तन करो वह अवश्य तुम्हारी मन की इच्छा पूर्ण करेगा। भावी सुख प्राप्ति की आशा मन में धारण कर इस क्षणिक दुःख को भूल जाओ। माता! कुछ भी शंका मन में न लाओ।

नन्द—चुप दुष्ट, अत्याचारी, क्यों व्यर्थ अपने मुँह का अनमोल रत्न खोकर परमेश्वर के नाम को कलंक लगाता है। ढकेलो इसे शीघ्र कालीखोह में ढकेलो। इसे जीवित रखना महापाप है। यह पुत्र नहीं, पुत्र-रूप में माता-पिता के जीवन का दारुण संताप है।

यशोदा—वत्स, तुम मुझे समझा रहे हो, किन्तु मेरी पुत्र-ममता नहीं समझती। तुम मुझे शान्त होने को कहते हो, किन्तु हृदय शान्त नहीं होता। माता सब कुछ सह सकती है, किन्तु पुत्र वियोग कभी सहन नहीं कर सकती। दिखाओ, दिखाओ! माधव! एक बार पुनः अपना वही विराट-स्वरूप दिखाओ। और मुझ समान इन अज्ञानियों को अपना चमत्कार दिखा कर इन्हें आश्चर्यित करो। अन्यथा मुझसे तुम्हारा यह दण्डविधान कभी देखा न जायगा। मैं भी तुम्हारे साथ ही कालिया खोह में कूद

पड़ूँगी तुम्हें अकेले मृत्यु-मुख में कदापि प्राण गँवाने जाने न दूँगी।

नन्द—बस २ रानी! पुत्र-मोह से तुम्हारा मस्तक भ्रमण कर रहा है। अतः मैं आज्ञा देता हूँ कि इस व्यर्थ के बकवक को बन्द करो और मेरे साथ राजमहल को वापस चलो।

माधव—माता! मैं पुनः कहता हूँ कि महाराज की आज्ञा न टालो. इस निस्सार पुत्र-मोह को हृदय से निकाल डालो। जितना ही मैं दुराचारी और व्यभिचारी हूँ. उतना ही तुम भी भ्रम में पड़ी हुई अज्ञान हो रही हो। निश्चय जानो, तुम्हारी और मेरी एक ही अवस्था है। तुम जिस भ्रम सागर में गोता लगा रही हो उसी प्रकार मेरा मस्तक भी इस कालियाखोह में डूबने के लिये भ्रमण कर रहा है। इस समुद्र-मंथन से न मालूम तुम और कौन सा रत्न बाहर निकालोगी, ध्यानदृष्टि से इसकी कल्पना कर लो। उन अमूल्य रत्नों का अर्थ मुझ समान जो भ्रम में पागल होंगे वेही समझ सकेंगे। उत्साही वीर के समान पापों से द्वन्द युद्ध मचाने के लिये ही मैंने रणक्षेत्र में पाँव रखा है। इस पाप पुण्य रूपी रण में मुझे ही यश प्राप्त होगा। तीसरे दिन विजयी वीर की तरह बाहर निकल कर तुम्हारी आँखें शीतल करूँगा। तभी सूर्य भगवान अपने उच्च आसन पर विराजमान हो संसार को प्रकाशित करेंगे। ले चलो विधिको! मुझे इस काली-तट पर ले चलो। ढकेलने का परिश्रम मैं तुम्हें देना नहीं चाहता। पिता माता, इष्ट मित्र, जन-परिजन सब को साक्षी रख कर मैं स्वयं इस भयंकर विषमय कालियाखोह की गोद में अपने को सौंपता हूँ।

दमन दुष्टों का कर संसार में यश की बहे धारा।
सभी हों मुग्ध कम्पित स्तब्ध हो जाये जगत् सारा॥

(माधव जल में कूद पड़ते हैं। यशोदा मूर्च्छित होकर गिर पड़ती हैं। सूर्यदेव अस्त होकर सर्वत्र अन्धेरा छा जाता है। चारो तरफ से भयंकर शब्द सुनाई देते हैं। भयंकर दृश्य)

टेब्ला—ड्राप

(लम्बोदर का मठ)

लम्बो०—(स्वगत) ओह ! राधा के मुँह से "माधव, बचाओ" शब्द निकलते ही "मैं आया राधा ! न घबराओ !" ऐसा प्रतिउत्तर न मालूम कहाँ से जादू की तरह सुन पड़ा। जिसे सुनते ही मारे भय के मेरा दम घुँट गया। मैंने तो समझा कि शायद नन्दराज ने माधव को छोड़ दिया। मन में कहा—बस बेटा लम्बोदर अब तेरी कम्बख्ती आई। इस कारण ताबड़तोड़ सिर पर पाँव रख जो भागा, तो एकदम इस मंदिर में आकर शान्ति पाई, बड़ी मुश्किल से जान बचाई। किन्तु यह बड़े आश्चर्य की बात है कि माधव के डूबते ही एकदम अन्धकार छा गया ! न मालूम यह कैसा जादू है या कोई दैवी-माया ! लाख सोचने पर भी इसका रहस्य कुछ समझ में नहीं आया! इस घटना से सब के सब घबरा गये हैं। लोग चारों तरफ से जमा होकर मुझसे प्रश्न करते हैं। जिससे मैं एकदम घबरा गया। नाकों में दम आ गया। भला, मैं इसका क्या उत्तर उन्हें दे सकता हूँ, किन्तु मैं भी ऐसा वैसा

नहीं कि चुप रह जाऊँ। कोई न कोई तरकीब लड़ाकर बात बना लेता हूँ और अटसट उत्तर देकर अपना पिण्ड छुड़ा लेता हूँ। (दर्वाजे की ओर देख कर) अरर! यह तो सामने से नन्दराज प्रकीर्ण और प्रमोद के साथ २ इधर ही चले आ रहे हैं। देखूँ ये लोग अब कैसा रंग लाते हैं। संभलना बेटा लम्बोदर। अब साढ़ेसाती शनिदेव तेरे ही सिर आते हैं। (तीनों का प्रवेश)

नन्द०—गुरु महाराज! सेवक आपके चरण में सादर नमन करता है। हृदय की व्याकुलता और मन की चंचलगति को संभाल न सकने के कारण दास दर्शनार्थ आपकी सेवा में चला आया। किन्तु महाराज! यह कैसी विचित्र माया कि माधव के कालियाखोह में कूद पड़ते ही चारों तरफ भयंकर अन्धकार ने अपना डेरा जमाया—प्रजा पर नाना प्रकार के संकट आ रहे हैं। इसमें मन बड़ा व्याकुल है, अशुभ आशंकाओं से चित्त बहुत ही आकुल है।

लम्बो०—राजन्! क्या आप यह समझते हैं कि माधव को कालियाखोह में डुबा देने ही से यह आपत्ति आई?

नन्द०—जी हाँ! कुछ २ ऐसी ही शंका मन में समाई। तभी से महाराज! हृदय धड़क रहा है, अंग फड़क रहा है।

हुआ व्याकुल मेरा मन, देख कर दैवी अजब घटना।
यह क्या है, खेल जादू का, या माया की विकट रचना॥
मेरे कानों में उन बातों ने बस एक गूँज डाली है।
जो निकले मुख से माधव के विपद अब ढ़ाने वाली है॥

लम्बो०—राजन्! आप व्यर्थ व्याकुल होकर मन में शंका न लाइये। यह पुत्रमोह है, हृदय को शान्त बनाइये।

नन्द०—आह! माधव के कालियाखोह में कूद पड़ते ही जो भयंकर गड़गड़ाहट हुई उससे सब के मन में एक आतंक समा

गया ! सूर्यनारायण एकदम अस्त हो गये। मध्याह्नकाल में ही सर्वत्र अंधकार छा गया। लोगों में हा-हाकार मच गया। गीदड़ और सियारों का रुदन सुनाई देने लगा। महारानी कहती हैं कि ये सब आपत्तियाँ माधव के साथ छल व्यवहार करने का ही परिणाम है। महाराज ! आप ज्ञानी हैं—सर्वदर्शी हैं। इसलिये हमारे मन का समाधान कर हमें शान्ति दिलाना ही इस समय आप का काम है।

प्रमोद—हाँ २ गुरुराज अवश्य महाराज की शंका समाधान कर सकते हैं। महाराज ! आप तपस्वी हैं—सर्वदर्शी हैं। सम्पूर्ण प्रजा भय से व्याकुल हो गई है। अतः अपने अन्तरज्ञान से इसका रहस्य समझाइये, इस विपत्ति से हमें शीघ्र बचाइये।

लम्बो०—राजन् ! शान्त ! शान्त रहो। तुम्हारी शंकाओं का मैं अभी यथासाध्य निवारण करता हूँ। समाधि लगा कर सारे रहस्यों का अभी उद्घाटन करता हूँ (नेत्र बन्द कर समाधि लगाता है) (स्वगत) भाई ! अब कुछ न कुछ युक्ति अवश्य लगानी चाहिए। इन्हें उल्लू बना कर अपना मतलब गाँठना चाहिए। (प्रगट) राजन् ! समाधि से ज्ञात हुआ कि माधव को कालियाखोह में डुबाने से पाप का एक जंगी मशाल अवश्य बूझ कर शान्त हो गया। किन्तु पाप का एक दूसरा वृहत् मशाल अभी राधिका मौजूद है। देवताओं की आज्ञा है माधव की तरह राधिका को भी जलसमाधि दिलाइये और इस ईश्वरीकोप से अपने को बचाइये, कारण जब तक राधा को ढूँढ़ कर खोह में न डुबाओगे तब तक कभी ईश्वरी कोप से छुटकारा न पाओगे। किन्तु तुम इस काम को कैसे कर सकोगे, यही एक कठिन विधान है, कारण कि उस पर तुम्हारा प्रेम पुत्री के समान है।

नन्द०—गुरुवर ! जिसने पुत्र-प्रेम को त्याग कर प्रत्यक्ष उसके

वध की आज्ञा दे दी, वह क्या राधा के प्राण वध के लिये भय करेगा ? कभी नहीं। प्रतिहारी ! जाओ, अभी शीघ्र नगर में ढिंढोरा पिटवा दो कि जो कोई राधा को ढूँढ कर उसे कालियाखोह में डुबावेगा वह राजकोश से सहस्र मुद्रा पुरस्कार पायेगा।

(प्रतिहारी का प्रस्थान)

प्रकीर्ण—किन्तु गुरु महाराज ! मध्याह्नकाल में ही सूर्यास्त कैसे हुआ, यह तो समझाइये ?

प्रमोद—हाँ महाराज ! सूर्यास्त के साथ ही अन्धेरा कैसे हुआ इसका भी रहस्य कुछ सुलझाइये ?

लम्बो०—भाई ! यह सब शंकर की इच्छा है, उसी की माया है। इससे अधिक मैं कुछ बता नहीं सकता। कारण कि मुझे देवताओं की आज्ञा है कि इस रहस्य को मैं किसी पर प्रकट न होने दूँ। भला, जहाँ अत्याचार और व्यभिचार का अधिकार होगा वहाँ अन्धकार का विस्तार नहीं होगा ?

नन्द०—महाराज ! धृष्टता क्षमा हो ! हम अज्ञानी हैं—मूढ नादान हैं। इसलिये आप से सविनय प्रार्थना करते हैं कि दीन प्रजागणों के संकट हरणार्थ कुछ योजना कीजिए। तप, यज्ञ, हवन आदि का विधान कीजिए। इस के लिये चाहे जितना धन व्यय हो जितनी हत्याएँ करनी पड़ें—कोई चिन्ता नहीं, राजानन्द सहर्ष तय्यार है, आपकी आज्ञा दास को सिर आँखों से स्वीकार है।

लम्बो०—शान्त राजन् ! शान्त हो जाओ मन में कुछ भी भय न लाओ। मैं जैसा कहता हूँ यदि वैसा ही करोगे, तो अवश्य सब विपत्तियों से छूट जाओगे। आशीर्वाद देता हूँ, तुम्हारा कल्याण हो।

नन्द०—जो आज्ञा देव !

(नन्द का कुछ आदमियोंके साथ प्रस्थान)

लम्बो०—अच्छा प्रकीर्ण प्रमोद ! अब तुम दोनों भी चले जाओ। राधा को ढूँढ कर शीघ्र कालिया खोह में घसीट लाओ।

दोनो—जो आज्ञा गुरुजी ! (जाना)

लम्बो०—(स्वगत) बच गया ! बड़ी भारी आफत से बच गया ! जब लोग मेरे पास नहीं आते थे तब मुझे इन लोगों को बुलाने के लिय आकाश-पाताल एक करना पड़ता था, किन्तु अब इनकी परछाहीं से ही मुझ पर ज्वर चढ़ आता है। इनकी प्रश्नोत्तरी की झड़ी से मेरा कलेजा काँप जाता है। चलो आज तो किसी प्रकार "परमेश्वरी कोप" कह कर भलेही छुटकारा पाया। अब शीघ्र कालिया तट पर जा कर आसन जमाऊँ। प्रकीर्ण और प्रमोद राधा को पकड़ कर वहाँ लावेंगे। उस समय मुझे पुनः अपना ढोंग फैलाना होगा। राधा को फुसला कर अपने प्रेम के जाल में फंसाना होगा। राधा ! राधा ! अब भी तू मेरी बात मान जा, मेरे साथ चल कर मन्दिर में बास करेगी, तो मैं राजानन्द से कह कर तुझे प्राण दण्ड से बचाऊँगा, कुछ भी आँच आने न दूँगा।

मन्दिर में आ कर मेरे तू अब निवास करले।
लूटें बहार हम अब दुख ताप सब तू हरले॥

गाना

प्यारी को लाऊँ, मनाऊँ, भर २ प्याला प्रेम पीऊँ पिलाऊँ।
कैसा हूँ मैं आला, बन कर स्यानाकाला, जैसे विषधर डसने वाला॥
अन्तर मन्तर जन्तर तन्तर सारी मेरी खूबी है वाह वाह वाह !!! चाहूँ जिसे, बहकाऊँ जिसे फुसलाऊँ जिसे। हहहहह

(गाते २ जाना)

कालियाग्रोह

(एक पत्थर की शिला पर नीलाम्बर बैठे हैं। डार्कसीन की गहरी छाया कालियादह पर पड़ रही है।)

नीला०—मुझे लोग पागल कहते हैं, किन्तु पागल कौन मैं या वह? पागल को पागल पहचानता है। मूर्ख की महिमा मूर्ख ही जानता है। भ्रान्तजीव! क्यों मोह में फँसा हुआ अंधकार में टटोल रहा है? हीरे को ठोकर मार कर कंकड़ पसंद कर रहा है? आ आ, इस पागल से पूछ कि इसमें क्या सार है? वास्तव में यह एक दिव्य प्रकाश है या गाढ़ मोह का भयंकर अंधकार है। माधव माधव! क्या नहीं सुनते? अभी तक क्या तुम्हारा कार्य समाप्त नहीं हुआ? आओ शीघ्र बाहर निकल आओ। लोग कहते हैं, तुम कालीदह में डूब गये। परन्तु प्यारे माधव! सच कहो, डूबा कौन? तुम या कहने वाले? भला तुम्हें कौन डुबा सकता है? तुम तो स्वयं डूबे हुए लोगों को पार तारते हो। भक्तों की रक्षा कर पापियों को संहारते हो। ये अज्ञान जीव डूब कर गोता लगा रहे हैं। आओ, शीघ्र बाहर आओ और इन्हें पार लगाओ। डूबे हुए लोगों की तुम्हीं तरणी हो! मैं ही इन्हें बाहर निकालता किन्तु मेरा मार्ग बिल्कुल भिन्न है। मैं तो एकदम उठाकर फेंकना जानता हूँ किन्तु तुम धीरे से सहारा देकर आश्रय देते हो—हरेक की प्रेम से परीक्षा लेते हो।

डूब गये तुम कालीदह में, कालीनाग नथाने को।
डूब गया वह खुदही जिसने, चाहा तुम्हें डुबाने को॥
डूबे हुए को तारा तुमने, कर धर कर भव सागर से।
पाप धार में बहते हैं नर, ज्यों बहता जल गागर से॥

गाना।

पागल बने फिरते हैं दिलदार के लिये।
पागल २ लोग कहें पागल को कोई क्या पहचाने।
जो पहचाने वही सयाना उसी को ज्ञानी जग जाने॥
पागल बने फिर०—
हुआ सबेरा, बजा नकारा, कूच की है अब तय्यारी।
लेना हो सो ले ले अब तू क्यों करता आहो जारी॥
पागल बने०॥—

(कामिनी का प्रवेश)

कामिनी—आह! मेरा प्यारा भाई न मालूम कहां चला गया! राधा को जब से जंगल में छोड़ आया तब से उसका कहीं पता नहीं। भय्या! भय्या! कहां हो? आओ; आओ एकबार तो अपना मुखड़ा दिखला जाओ।

(कामिनी, 'भय्या २' कह कर पुकारती है)

नीला०—(स्वगत) मेरी पत्नी कामिनी! आह! बिचारी मोह में पड़ी हुई अंधकार की ओर दौड़ी जा रही है। (प्रगट) प्रिये! तुम किसे ढूँढ रही हो?

कामिनी—(चौंक कर) आप कौन हैं? मैं अपने भाई अनय-राज को ढूँढ़ रही हूँ।

नीला०—ठीक है, किन्तु भाई या स्वामी, दोनों में से एक को ही तुम यहाँ पा सकती हो, बताओ तुम किसे चाहती हो?

कामिनी—(नीलाम्बर को न पहचान कर) चुप दुष्ट ! मेरी हँसी कर रहा है ? परायी स्त्री को मसखरी में उड़ा रहा है ?

नीला०—शुभे ! परायी स्त्री से नहीं, यह पागल नीलाम्बर अपनी ही धर्मपत्नी से मसखरी कर रहा है।

कामिनी—(पहचान कर लज्जा से) कौन मेरे पतिदेव, मेरे पागल भोले पतिदेव ? बताइये २ अब क्या होगा ? कैसे इस दुख-सागर से बेड़ा पार होगा ?

नीला०—कामिनी ! शान्त हो ! न घबराओ। तुम्हारा पति तुम्हारे सामने उपस्थित है। माधव कालियाखोह में चले गये हैं। आओ, यहाँ पर बैठ जाओ और उनकी प्रतीक्षा में ध्यान लगाओ।

कामिनी—नहीं, पहले हमें अपने भाई को ढूँढ़ना चाहिए।

नीला०—नहीं २ कामिनी ! पहले उस परमपिता परमेश्वर को ढूँढ़ निकालो, तब कहीं दूसरी ओर दृष्टि डालो। तत्काल ही तुम्हें अपने भाई का पता मिल जायगा। हमारा आशारूपी कमल माधव के आते ही खिल जायगा।

कामिनी—किन्तु आप ऐसा क्यों कह रहे हैं ?

नीला०—हैं आप ! यह तुम किसको कह रही हो ?

कामिनी—अपने पति को। इह काल, पर काल के स्वामी को। किन्तु आप ऐसा क्यों मुझ से पूछ रहे हैं, मैं नहीं जानती। स्त्री धर्म के अनुसार आप को आप कहना मेरा कर्तव्य है।

नीला०—क्यों नहीं, बहुत ठीक ! आप जिस प्रकार स्त्रीधर्म का पालन कर रही हैं, वह मुझे भलीभांति ज्ञात है करो २ गाली की खूब वर्षा करो, हम हनुमान अर्थात् शंकर के अवतार हैं और आप गिरिजा, उनके प्रेमाधार हैं। हम वैराग्य के कारण आप को अंगीकार नहीं करते, परन्तु आप को हमारी पार्वती के समान सेवा करनी थी क्या यह सत्य है ? झूठ तो नहीं ?

कामिनी—हे ईश्वर ! यह कैसा आश्चर्य ! आज तो यह ठीक बोल रहे हैं। क्या इनका पागलपन दूर हो गया ?

नीला०—यद्यपि आपने मूक व्रत धारण करलिया है, तथापि हमें आपके अन्तःकरण में प्रवेश करने की कला भलीभांति ज्ञात है। अच्छा बताइये, आपको कुछ दिखाई देता है ?

कामिनी—हाँ, किन्तु अंधेरे में नहीं।

नीला०—याने तुम्हें अपनी आँखों से जो दीख पड़ता है वही देख सकती हो या और भी कुछ ?

कामिनी—अरे यह भी कोई बात है, जो मुझे और मेरी आंखों को दिखलाई देता है वही मैं देखती हूँ। मैं और मेरी आँखें कोई निराली थोड़ी ही हैं।

नीला०—निराली नहीं—यह कैसे मान लूँ ? नेत्रों को जो दिखाई देता है वह भी तो आप को नहीं दिखाई देता। फिर कैसे कहती हो निराली नहीं हैं ? आप का देखना बिल्कुल ही भिन्न है। अच्छा, बताइये राधा इस समय कहां है ?

कामिनी—कौन जाने कहां है ? यह मैं कैसे बता सकती हूँ ? हाँ भय्या ने उसे त्याग दिया है। इतना अवश्य जानती हूँ।

नीला०—हाँ, जिस प्रकार आपने मुझे त्याग दिया है उसी प्रकार आपके भय्या ने भी राधा को त्यागकर आप की शिक्षा को ग्रहण कर लिया है। तुमने मुझे त्यागा। अनयराज ने अपनी स्त्री को त्यागा और नन्दराज ने अपने पुत्र को त्यागा। वाह खूब कैसा मजा है ! जिधर देखो उधर ही त्यागियों की भरमार है। अच्छा, ठहरो। मैं अंधों की एक माला तय्यार करता हूँ और उस में जिन २ मणियों को पिरोना है यहीं इकट्ठा कर लेता हूँ।

कामिनी—परन्तु मुझे तो अभी अपने भाई को ढूँढ़ना है। आपकी तरह व्यर्थ अपना सिर मुझे नहीं पिटाना है।

नीला०—नहीं २ आप कष्ट न करें। मैं उन्हें यहीं बुला लाता हूँ। यह देखो गया। तुम्हारा सन्देश भी उन्हें कह दिया, वे अभी आते हैं। न घबड़ाओ, आओ यहाँ बैठ जाओ।

कामिनी—हैं! क्या फिर पागल हो गये? होश हवास से बाहर हो गये? बस अब यहाँ ठहरना भी महा अपमान है। पागल के आगे रोना और भैंस को बीन सुनाना एक समान है।

नीला०—हाँ, न ठहरना हो न ठहरो, यह तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है। किन्तु भाई से भेंट न होगी, इसकी भी कुछ खबर है? वह देखो आही गये, क्यों अब तो मेरे पागलपन पर विश्वास आया?

(अनयराज का आना)

कामिनी—(स्वगत) अरे! यह तो सचमुच ही भय्या आ गये। यह कैसी दैवी माया! सचमुच ही भय्या हैं या भूत की छाया? भय्या! तुम अब तक कहाँ थे और कैसे चले आये?

अनय०—क्यों, जहाँ रहना चाहिये वहाँ था और तुम्हारे बुलाने पर चला आया।

कामिनी—हैं! मैंने बुलाया? कब और किससे बुलवाया?

अनय०—क्यों अभी नीलाम्बर जी मेरे पास तुम्हारा संदेशा लेकर आये थे?

कामिनी—वाह अजब तमाशा है! ये तो यहीं कब से मेरे पास बैठे हैं। भय्या! तुम्हें भ्रम तो नहीं हुआ?

अनय०—मुझे नहीं वरन् तुम्हें ही भ्रम हुआ है। मैं अभी यहाँ तक इन्हीं के साथ २ आया, तुम यहाँ मिलोगी यह मुझे मालूम न था।

कामिनी—मैं तुम्हें ढूँढ़ रही थी इतने में इनसे भेंट हो गई। इन्होंने पूछा,—"किसे ढूँढ़ती हो ?" मैंने कहा—"भय्या को"। इसके बाद कहा कि तुम्हारा संदेशा तुम्हारे भाई को पहुँचाता हूँ। वह अभी आते हैं और जो देखती हूँ तो सचमुच ही तुम सामने खड़े हो।

नीला०—क्यों अनयराज ! यह बात तुम सच समझते हो ?

अनय०—बड़ा आश्चर्य है। जब यह कहती है, तो सच मानना ही पड़ेगा। किन्तु कहिये नीलाम्बर जी ! आप मेरे साथ ही साथ आये थे या नहीं ?

नीला०—ठहरो, उसे पीछे कहेंगे। क्यों कामिनी ! अनयराज के कथन को सत्य समझती हो या इसमें भी अविश्वास करती हो ?

कामिनी—नहीं २ कदापि नहीं ? या ईश्वर ! जब आप प्रत्यक्ष मेरे सामने बैठे हुए हैं, तब भला आप भय्या के साथ चले आये, इसे कैसे मान लूँ, आँखों देखी बात को क्योंकर झूठी ठान लूँ ?

अनय०—मालूम हुआ। तुम दोनों अंधे हो। और अंधे को कुछ सूझ नहीं पड़ता, यह स्वाभाविक है।

नीला०—नहीं २ मैं अंधा या पागल नहीं, सज्ञान हूँ।

कामिनी—मैं भी अन्धी या बावली नहीं, सावधान हूँ।

नीला०—ठहरो २ क्यों व्यर्थ झगड़ते हो। मैं ठीक न्याय करता हूँ। सुनो—तुम दोनों अन्धे हो, साथ ही कुछ २ पागल और मूर्ख भी हो।

दोनों—यह कैसे ?

नीला०—ऐसे कि तुमने अनयराज ! अपनी पत्नी राधा को त्यागा। और (कामिनी से) तुमने अपने पति को पागल समझ कर घर से दुतकारा। क्या यह पागलपन या मूर्खता नहीं है ?

इस लिये तुम मूर्ख होकर भी अंधे हो। बिना ठीक प्रमाण पाये किसी को दोषी ठहराना यही मूर्खता की निशानी है। जो पागल होकर भी पागलपन को समझे उसे ही समझो कि ज्ञानी है।

अनय०—तुम पागल हो और मस्तिष्क के विकार से बेकार हो।

नीला०—बस यही इस घट का सिद्ध कथन है। कसौटी में कोई कमी नहीं होती। सोने का कस ही सदा कम होता है। (कामिनी से) अच्छा बताओ, यदि राधा और मुझे एक साथ बैठे बातचीत करते तुम देख पाओगी उस समय मन में कौन सी कल्पना हमारे विषय में लाओगी?

कामिनी—मैं क्या बताऊँ, कुछ भी रहस्य समझ में नहीं आता। ऐसे घोटाले में पड़ गई हूँ कि कोई भी सिद्धान्त मन में जमने नहीं पाता।

नीला०—हाँ, अब तुम्हें कुछ २ दिखाई देने लग गया है। न घबड़ाओ, २ अब शीघ्र ही तुम्हें असली तत्व का ज्ञान हो जायेगा। तुम्हारे हृदय का अन्धकार शीघ्र ही दूर हो जायेगा। अच्छा, यह बताओ राधा कैसी है?

कामिनी—वह भी मुझे नहीं मालूम! और आप ऐसे होंगे, यह भी मुझे ज्ञात न था। राधा वैसी थी इस पर भी विश्वास नहीं होता।

नीला०—हाँ, अब तुम राह पर आ रही हो। यह मेरे सहवास का परिणाम है। क्यों अनयराज! राधा को तुमने व्यभिचारिणी कैसे ठहराया?

अनय०—बहिन के कहने से, क्योंकि इसी ने मुझे विश्वास दिलाया।

नीला०—किन्तु सुन रहे हो, अब वह क्या कह रही है?

इसी से पूछ कर दिल का समाधान कर लो। जो बिना समझे अन्धे के पीछे दौड़ जाता है वह खुद ही गड्ढे में अपने को गिरा हुआ पाता है।

अन०—हाय! मैं अजब गोरखधंधे में पड़ गया हूँ। राधा को मैंने कैसे व्यभिचारिणी ठहराया? बार २ सोचने पर भी इसका रहस्य समझ में न आया। हाय! एक मूर्खा लड़की के कहने से उत्तेजित होकर—इस पागल कामिनी के जहर भरे शब्दों पर विश्वास कर मैंने निष्पाप राधा को पापिनी ठहराया। उसकी हत्या करने को तय्यार हुआ, और अन्त में उसका परित्याग कर डाला! इस पश्चात्ताप की आग मेरे हृदय में भयंकर अशान्ति की ज्वाला सुलगा रही है। अन्तःकरण में एक प्रलयकारी हलचल मचा रही है।

कामिनी—क्षमा करो भय्या! इस अभागिनी को क्षमा करो, इन सारे अनर्थों की जड़ यही तुम्हारी दुर्बुद्धि बहिन कामिनी है। वास्तव में वही अपराधिनी है। तुम्हारे सरल और सीधे स्वभाव पर मैंने ही संशय का विष छिड़का। हाय! ईश्वर! मैं ही आज अपने भाई के नाश का कारण हुई।

नीला०—सच है, मनुष्य स्वार्थ में अन्धा हो जाता है। अच्छा अनयराज माधव को खोह में डुबाया, इसका तुम्हें कुछ भी रंज न आया?

अनय०—न पूछो भाई, रंज का कारण न पूछो। माधव के वध का और साथ ही इस समस्त वृन्दावन के नाश का मैं ही एकमात्र कारण हूँ। माधव! मेरे परम प्रिय मित्र माधव! क्या तुम मुझे पुनः प्राप्त नहीं हो सकते?

नीला०—क्यों नहीं? अवश्य प्राप्त हो सकेंगे। अपनी भूल और अपराध का पश्चात्ताप सच्चे हृदय से करो, उनसे स्नेह

जोड़ कर प्रेम से पुकारो। माधव! आओ, शीघ्र बाहर आओ। चलो, अनयराज! हम भी कालियाखोह में कूद पड़ें। क्यों बोलो तय्यार हो?

अनय०—अहा! अब सत्य का असली रूप प्रकाश में आ गया। मोह का गाढ पर्दा नेत्रों से हट गया। नीलाम्बर जी! तुम न पागल ही हो और न मस्तिष्क से बेकार ही हो। यथार्थ में पागल हम लोग हैं। हमीं ने राधा के माधव पर के ईश्वरीय प्रेम को विषयी प्रेम का रंग चढाया। मेरी दृष्टि अन्धी हो गयी थी, आज तुम्हीं ने उस पर दिव्य अंजन लगाया। अब बताओ, मुझे मेरी प्यारी, लाडिली राधा कहां मिलेगी?

मिलेगी अब कहाँ वह स्वर्ग की देवी मुझे फिर से।
मिले प्रारब्ध से तो प्रेम जोड़ूँगा नये सिर से॥

नीला०—शान्त अनयराज! वह अभी यहाँ आने वाली है। देखो, यह कालिया-खोह का किनारा एक प्रकाण्ड रंगभूमि है। यहाँ पात्रों को एकत्र होकर अपना २ पार्ट अदा करना नितान्त आवश्यक है। देखो राधा आहीं गई।

(राधा, लम्बोदर, प्रमोद और प्रकीर्ण का प्रवेश)

अनय०—अहा! आ गई! आ गई! मेरी प्राणेश्वरी, प्रेम की देवी राधिका आगई! लाडिली! राधा! प्रियतमे, अपने इस अपराधी निष्ठुर स्वामी को क्षमा करो। हैं! प्रमोद! यह चुप क्यों है? मेरी ओर नहीं आती थी इसलिये तुम लोग इसे पकड़ कर तो नहीं लाये हो? छोड़ो, छोड़ो, इसे छोड़ो मेरे पास आने दो। हैं! तुम नहीं छोड़ते? क्यों किस लिये?

प्रमोद—अनयराज, आपकी पत्नी राधिका को कालियाखोह में डुबाने की राजा नन्द ने हमें आज्ञा दी है, इसलिये राजाज्ञा का पालन करना हमारा कर्तव्य है।

अनय०—राजाज्ञा मुझे भी मान्य है, किन्तु शायद प्रमोद! तुम्हारा मस्तिष्क भ्रमण कर रहा है—तुम अवश्य पागल होगये हो। भला, राधा ने ऐसा कौन सा अपराध किया है जिससे उसकी इस प्रकार जान लेने को तुम लोग तय्यार हो?

प्रमोद—अनयराज! आप अपराध पूछते हैं? अपराध कोई ऐसा वैसा नहीं, बड़ा भारी अपराध है। इन सारे अनर्थों और उत्पातों की जड़ यही पापिनी है। इस कारण इसे इस कालिया-ह्रोह के जहरीले जल में डुबाये बिना सूर्य दर्शन न होगा। ऐसा ही गुरु महाराज का सत्य कथन है।

लम्बो०—हाँ हाँ ठीक है, सूर्य-दर्शन ही क्या यदि इस पापिनी को—

राधा—आह! मुझे सब ही पापिनी बनाते हैं। कैसा आश्चर्य है इसका अर्थ कुछ भी समझ में नहीं आता है। जो स्त्री संसार के पशुवृत्ति मनुष्यों की विषय-वासनाओं को अपना सतीत्व रत्न बलिदान करे उसे ही लोग यदि सती कह कर पुकारते होंगे तो अवश्य उनकी दृष्टि में मैं पापिनी हूँ। अनयराज! जिस माधव के साथ मैं आज छोटी से बड़ी हुई। जिसके पवित्र सहवास में भगिनी भाव से मैंने कालक्षेप किया, जिसके मुखारविन्द से ज्ञान-रस के प्याले पीकर मैं परितृप्त हुई उसी देवरूप माधव की पवित्र भक्ति को लोग व्यभिचारी-प्रेम कहते हैं? क्या मातृ प्रेम, पितृ प्रेम, भ्रातृप्रेम, और भगिनीप्रेम का नाता संसार से उठ गया? क्या धर्म के प्रकाश में केवल जलाने-सताने और अविद्या के फैलाने का ही शक्ति शेष रह गयी?

अनय०—राधा! राधा! मुझे क्षमा करो। मैं पश्चात्ताप की अग्नि से जल रहा हूँ। अपनी विथा से आप ही तड़प २ कर मर्मान्तिक कष्ट भोग रहा हूँ। हा! दो निरपराध प्राणियों को

व्यर्थ दुःख देने का आज मैं ही कारण हुआ। यह विचार मन में आते ही मैं व्याकुल हो जाता हूँ। इच्छा होती है, अभी इसी कालिया-खोह में डूब कर मर जाऊँ, या अपने हाथ से अपने को मार कर इस दुःख से छुटकारा पाऊँ।

राधा—अनयराज! शान्त हो जाओ! ऐसा कुविचार मन में न लाओ। कदाचित् इस खोह में कूदने से आपकी इस जड़-देह को शान्ति मिल जाय, किन्तु आपकी अन्तरात्मा कभी शान्त न होगी। संसार के अनन्त पापों, अत्याचारों के कारण भगवान सहस्र-कर जी, यद्यपि इस सागर में डूब गये हैं, तथापि उन के कर्म में लिखे हुए दुख-क्लेश का उपभोग करने के लिये बार बार उन्हें अवतार धारण करना पड़ता है। यही प्रकृति का नियम है।

अनय०—किन्तु सत्पुरुषों और महान आत्माओं को बार बार जन्म लेना नहीं पड़ता। वे अपने अलौकिक कर्म से स्वयं उच्च पद को प्राप्त हो जाते हैं। यह मानवी देह भी बार २ प्राप्त नहीं होती। अतः बताओ! माधव मुझे पुनः कैसे प्राप्त होंगे? ओह! मानवी स्वभाव की दुर्बलता के कारण मुझ में पशुवृत्ति का संचार हुआ। हा! राधा! बचाओ २!! मेरा अन्तःकरण फटा जाता है। संताप और वेदना के कठिन चपेट से कलेजा मुँह के बाहर चला आता है।

राधा—शान्त! अनयराज! शान्त! जब आप के अन्तः-करण का घोर अन्धकार नष्ट हो गया, तो माधव रूपी सूर्य का उदय होना अनिवार्य है। अपने अलौकिक कर्म से संसार को सुख पहुँचाना ही महान पुरुषों का सत्कार्य है। कालिया सागर के ज़हरीले पानी पर माधव की विमल मूर्ति का उदय होते ही आकाश के स्वच्छ आइने में माधव का प्रतिबिम्ब स्पष्ट झलक जायगा और उस तेजराशि से समस्त ब्रह्माण्ड उद्भासित हो जायगा।

अनय०—किन्तु समस्त ब्रह्माण्ड उस तेज से उद्भासित होने पर भी अनयराज का यह कलंकित मुख कभी उद्भासित न होगा। राधे ! तेरा यह पापी अनय महा अपराधी है। इसके पाप का कोई प्रायश्चित्त नहीं। राधा ! राधा ! तुम्हारे वियोग के पश्चात् हमारा पुनर्मिलन ऐसा मधुर और करुणामय होगा, यह मुझे मालूम न था। बताओ हृदयेश्वरी ! यदि तुम्हारी यह रम्भा-मूर्ति मुझे पुनः प्राप्त न हो, तुम्हारे पवित्र सहवास का प्रेम पूर्ण सुख मुझे न मिले, तुम्हारे प्रेम-प्रकाश में जुगुनू होकर चमकना मेरे लिये असम्भव हो, तो यह नीरस-जीवन मैं किस प्रकार बिताऊँ ? किस भाँति तुम्हारे बिना अपनी आत्मा को शान्त बनाऊँ ?

राधा—अनयराज ! आत्मा के अविनाशी स्वरूप का ज्ञान होते ही वाह्य शरीर का लोभ एकदम नाश हो जाता है। मेरे इस क्षण-भंगुर शरीर पर आप का अखण्ड प्रेम है, किन्तु वही शरीर आज नष्ट हो जाने वाला है। इसी एक विचार से भयभीत होकर आप दुख के सागर में गोता खा रहे हैं। अस्तु प्राणनाथ ! इस देहाशक्ति को त्याग कर नित्य-सुख को प्राप्त कर लो। इस क्षणिक मोहमाया को दूर हटा कर उस अनन्त रूप का मन में ध्यान करो। उस अनित्य सुख की कल्पना में ही आप दुखी हो रहे हैं—किन्तु मेरे समान भाग्यशाली मनुष्य त्रिलोक में कोई भी न होगा। ऐसा आप समझने लग जायँगे—और जब उस अविनाशी सुख की कल्पना में आप तन्मय हो जायँगे तब खुद ही आप ब्रह्मानन्द में डूब जायँगे।

लम्बो०—ओहो ! अब तो यह ब्रह्मज्ञान छाँटने लग गयी अरे अनयराज ! क्या तुम पागल तो नहीं हो गये ? इस पापिनी को.....

अनय०—बस, खबरदार चुप रहो। कौन इसे पापिनी कहता

है ? इसके समान पवित्रता की देवी इस धरती ने दूसरी जनी ही नहीं। राधा, तेरी मधुर वाणी की झंकार से मुग्ध होकर मैं तीनों त्रिलोक को भूल गया था। किन्तु इस दुष्ट राक्षस की कर्ण-कटु चिल्लाहट से मैं एकदम जागृत हो गया। दुष्टो! तुम्हारी विषभरी कल्पनाओं पर विश्वास करके, मैंने अपनी मूर्खता से इस सती साध्वी देवी का परित्याग किया था, किन्तु आज मेरी बन्द आँखें खुल गयीं। हृदय का अन्धकार दूर हो गया। इस कारण इस रत्न को मैं पुनः अंगीकार करता हूँ और तुम्हारे इस नीच कृत्यों के कारण तुम्हें यथोचित दण्ड प्रदान करता हूँ।

लम्बो०—(स्वगत) ओह ! अब तो बड़ी भारी आफत आई ! यह अनय इस अमूल्य रत्न को अवश्य अब हम से छीन लेगा। इससे तो अब यह अच्छा है कि इसे इसी जहरीले खोह में ढकेल कर काम तमाम कर दें। न रहेगी बाँस न बजेगी बाँसुरी।

अनय०—बोल २ दुष्ट ! अब क्यों चुपचाप खड़ा है ?

लम्बो०—बस २ अनय ! तेरी मूर्खता को हम हाथ जोड़ते हैं। हम अन्तरज्ञानी अन्तरज्ञान से कहते हैं कि यह पवित्र नहीं, घोर अशुद्ध है, व्यभिचारिणी है। प्रमोद, प्रकीर्ण, क्या देख रहे हो, ढकेलो, शीघ्र ढकेलो।

प्रमोद—अनय ! राधा को जल में डुबो देना यही गुरुदेव की आज्ञा है, इसे कौन तोड़ सकता है ?

(यशोदा का सहेलियों के साथ आना)

यशोदा—मैं...मैं तोड़ सकती हूँ। गुरुदेव के कोपानल में अपनी आहुति देने के लिये यशोदा सहर्ष तय्यार है। अधिक नहीं केवल पाव घड़ी तक के लिये मैं इसे डूबने न दूँगी। गुरु-देव ! आपने तो महाराज को भली भाँति फाँस लिया है, परन्तु

मैं तुम्हें अच्छी तरह पहचानती हूँ—तुम्हारे कपट भरे रूप का खूब जानती हूँ।

लम्बो०—अजी प्रमोद! देखते क्या हो? रानी की धमकी से न डरना, क्योंकि जनता का कल्याण देखना ही हमारा धर्म है। यह तो जानते ही हो कि केवल जनता के लिये राजा नन्द ने पुत्र-वध की आज्ञा दी थी।

यशोदा—अरे नीच! मेरे पुत्र का नाश होना उसी प्रकार असम्भव है जिस प्रकार एक अमर आत्मा को नाशवान समझना। माधव अब शीघ्र ही बाहर निकलेगा और उसके बाहर आते ही सूर्योदय होगा।

राधा—माताजी! आप क्यों व्यर्थ इन्हें रोकती हैं। अनय-राज! आप भी क्यों इनके कार्य में बाधा डाल रहे हैं? आपका मन मेरी तरफ से शुद्ध हो गया। आपके संशयों की निवृत्ति हो गई। बस इतनेही से मेरी आत्मा हर्षोत्फुल्ल हो स्वच्छ आकाश में चमक रही है। आज मेरा स्त्री-जन्म सार्थक हुआ। आपकी संशय-निवृत्ति से मेरी भूख-प्यास सब नष्ट हो गयी। अहाहा! चारों ओर सुगंध लहरा रही है। मधुर स्वरों पर गायन और नृत्य हो रहा है, आकाश में देवगण इस राधा को धन्य धन्य कह रहे हैं।

लम्बो०—अरे! क्या देखते हो? ढकेलो, इसे पानी में शीघ्र ढकेलो!

अनय०—ओह! नरपिशाचो! यदि तुम्हें मेरी इस प्राणों की प्यारी राधिका के प्राणों की बलि ही लेना स्वीकार है, तो खुशी से ले लो, किन्तु राधिका से मेरा दूर होना बिल्कुल असम्भव है। शरीर से आत्मा, देह से काया, और जीव से छाया कभी अलग नहीं रह सकती। राजाज्ञा मुझे मान्य है। इस कारण

उसकी पूर्ति के लिये मैं राधा-सहित इस खोह में अपने को विसर्जन करता हूँ।

(कूदना चाहते हैं, इतने ही में मुरली की आवाज सुनाई देती है और साथ ही पानी के ऊपर कालिया के मस्तक पर माधव वंशी बजाते हुए नजर आते हैं। सूर्य उदय हो आते हैं। अंधकार नष्ट हो जाता है। आकाश से माधव पर पुष्प-वृष्टि होती है। नन्द आदि आते हैं और आश्चर्यित होते हैं।)

नन्द०—गुरु महाराज! यह मैं क्या देख रहा हूँ? स्वप्न में हूँ या जाग रहा हूं? इस पंचमुखी नाग के मस्तक पर खड़ा होकर अत्यन्त सुख से मुरली बजाते हुए नृत्य करने वाला यह क्या माधव ही है? मेरी आँखें मुझे धोखा तो नहीं दे रही हैं? यह जीवित कैसे रहा? इस भयंकर नाग के काल-ग्रास से कैसे बच गया?

यशोदा—महाराज! न तो आप स्वप्न देख रहे हैं और न आपकी आँखें आपको धोखा ही दे रही हैं। यह हम लोगों का वही प्यारा दुलारा माधव ही है जिसे आपने मृत्यु के मुख में ढकेल कर प्राण हरण करने का उपाय किया था। माधव के मुख से निकले हुए उस समय के शब्दों का स्मरण कीजिए। "मैं तीन दिन के बाद विजयी होकर बाहर निकलूँगा। उसी समय सूर्यनारायण अपने आसन पर स्थानापन्न होंगे। महाराज! देखिये यह मध्याह्न काल का सूर्य अपनी प्रखर किरणों से सबके मस्तकों में ज्ञान का प्रकाश डाल रहा है और माधव की मुरली का वही मधुर अनहद नाद जड़-चैतन्य को मुग्ध बना रहा है। आओ, मेरे प्यारे दुलारे माधव! शीघ्र जल से बाहर आओ।

माधव—माताजी! इस कालिया को मैंने अपनी मुरली के मधुर स्वर से मोहनी-मंत्र डालकर अपने वश में कर लिया है।

मुरली का स्वर बन्द होते ही यह मुझे खा जायगा। ऐसी दशा में इस काल के कराल गाल से किस तरह अपने को बचा सकता हूँ—कैसे आप लोगों के पास आ सकता हूँ ?

नीला०—बस २ माधव ! अब अधिक अपनी माया का कौतुक न दिखाइये, शीघ्र इस कालिया के सिर पर लात मारकर जल के बाहर निकल आइये। और सबके हृदय में आनन्द का स्रोत बहाइये।

नन्द०—आओ २ मेरे नेत्रों के तारे ! प्यारे दुलारे माधव ! शीघ्र आओ ! अपनी निष्ठुरता पर मुझे भारी पश्चात्ताप हो रहा है।

लम्बो०—राजन् ! क्या तुम पागल हो गये ? देखते नहीं ? कहाँ वह सुन्दर देह वाला माधव और कहाँ यह कृष्ण-वर्ण श्याम बालक !

माधव—हाँ, मैं कृष्ण हूँ—इस कालिया के विषैली दंश से मैं कृष्णवर्ण हो गया हूँ।

लम्बो०—अरे ! तुम तो परमेश्वर हो, फिर विष-बाधा तुम्हें कैसे हुई ?

माधव—इस देह धारण के साथ २ मानवी देह-धर्म का पालन करना आदि-पुरुष का अटल नियम है। किन्तु आत्म को इससे कुछ भी हानि नहीं होती। आज का मेरा यह चरित्र चित्रण संसार में कालिया-दमन के नाम से विख्यात होगा। और मेरा "कृष्ण नाम" ही त्रैलोक्य में प्रख्यात होगा।

लम्बो०—यदि सचमुच में तुम अवतारी पुरुष हो, तो जल तुम्हें स्पर्श न करेगा, तुम सूखा ही बाहर निकलोगे।

माधव—ठीक है, किन्तु पहले इस कालिया का निराकरण कर लें, तब दूसरी ओर ध्यान दें। यह मुझसे प्राण दान माँग रहा है। जाओ २ कालिया ! मैं तुम्हें प्राणदान देता हूँ। किन्तु

आज से तुम इस खोह का रहना त्याग दो। क्योंकि तुम्हारी विषभरी फुँफकार से वायु दूषित होकर वृन्दावन-वासियों को बड़ा कष्ट पहुँचाता है। इस कारण तुम आज से क्षीरसागर में जाकर आनन्द पूर्वक निवास करो। तुम्हारे मस्तक पर मेरे पाँव के पादुका-चिह्न अंकित हैं। इससे तुम्हें गरुड़-राज से कुछ भी भय न होगा। कालिया ! जाओ, अभय हो जाओ।

(माधव उसके मस्तक से कूद कर तीर पर आ जाते हैं। कालिया पानी में डुबकी लगाकर अदृश्य हो जाता है)

नीला०—अरे माधव ! इस लम्बोदर को क्या कोरा ही छोड़ दोगे ! अच्छा होता इसे भी कालिया के साथ ही साथ क्षीर-सागर में भेज देते, जिससे अपनी करनी का फल इसे मिल जाय, और इसके अन्तःकरण की ज्ञान-कली भी साथ ही खिल जाय।

माधव—लम्बोदर महाराज ! देखिये मुझे पानी ने स्पर्श नहीं किया। अब आप इस नीचवृत्ति को त्याग कर उस परम पिता जगदीश्वर से नेह लगाइये, और उसी की चिन्तना, आराधन में समय बिताइये। क्योंकि जगत् में एक मात्र सार हरि का गुण-गान है। जो ऐसा करता है उसी का कल्याण है। अनयराज ! कदाचित् मेरी इस दिव्य-योजना से संदेह रहित होकर तुम शान्तिधाम को प्राप्त हो गये। राधा भी इस दिव्य योजना में उत्तीर्ण हो गई। कहो २ राधा, अब मैं तुम्हारे लिये कौनसा प्रिय कार्य करूँ ? कौन सी वस्तु दूँ जिससे तुम्हारी प्रेम-भक्ति का प्रतिकार हो, प्रेम का उपहार हो।

राधा—माधव ! तुम सदा से मेरा प्रिय कार्य ही करते आये हो ! तुम्हारे उपकारों की कोई थाह नहीं। तुम भक्तों के प्रतिपालक और दुष्टों के कुलघातक हो ! आज मेरे पतिदेव का अन्तःकरण

तुम्हारी भक्ति से परिपूर्ण हो गया है। बस तुमसे यही विनती है कि मेरी पतिभक्ति के दिव्य प्रकाश में सदा मैं तारिका होकर जगमगाऊँ। और अन्त समय में तुम्हारी भक्ति और पति-सेवा करते २ इनके साथ २ अटल समाधि को प्राप्त हो जाऊँ।

माधव—तथास्तु, मनोकामना पूर्ण हो।

बँध गया हूँ मैं तुम्हारी भक्ति के बस तार में।
नाम हो राधा औ माधव का अमर संसार में॥

(दृश्य का बदलकर क्षीरसागर बन जाना, शेषशायी भगवान का अपूर्व दर्शन। देवताओं का नृत्य-गान)

गान

जय कमलापति, जय मधुसूदन।
जय वृजनन्दन, दुष्टनिकन्दन॥
जय नरहरि प्रभु कृष्ण मुरारी।
जय जय नटवर जय गिरिधारी॥

ड्राप

असली थियेट्रिकल नाटक

भक्त सुदामा	१)	तेगे सितम	।।।)
सत्य विजय	।।)	देशोद्धार	॥)
काशीविश्वनाथ	।।।)	भीष्म प्रतिज्ञा	।।।)
धर्मोजय	१)	मीराबाई	॥)
सती सुकन्या	॥।)	सती अनुसूया	॥)
कलियुग की सती	॥।)	बगला भगत	॥)
गरीब किसान	।।।)	संग्रामसिंह	॥।)
आजादी या मौत	॥।)	बालकृष्ण	॥)
संसार चक्र	॥।)	परशुराम	॥।)
देशदशा	॥।)	मदिरादेवी	॥=)
धर्मयोगी	।।।)	विश्वामित्र	॥।)
भारतवर्ष	॥।)	हुब्बेवतन	॥)
परीक्षित	१)	महात्मा कबीर	१)
गौतमबुद्ध	१)	तुलसीदास	॥=)
नलदमयन्ती	॥।)	श्रीरामलीला	॥)
पत्नीव्रत	॥।)	विल्वमंगल	॥)
सावित्री सत्यवान	॥।)	भारत-रमणी	॥।)
भक्त प्रहलाद	॥।)	गंगावतरण	॥)
कर्मवीर चंड	॥।)	अत्याचार	॥।)

भक्त विदुर	॥)	श्रवणकुमार	॥)
सीता बनवास	॥।)	काली नागिन	॥=)
श्रीमती मञ्जरी	॥=)	शरीफ बदमाश	॥=)
शकुन्तला	॥।)	ख्वाबे हस्ती	।=)
सती सुलोचना	॥।)	खून का खून	।≡)
हिन्दू स्त्री	॥।)	असीरेहीर्स	॥)
सौभाग्य सुन्दरी	॥।)	सैदेहवस	।≡)
अजामिल उद्धार	॥।)	यहूदी की लड़की	॥)
विक्रम चरित्र	॥=)	खूने नाहक	।=)
चक्रवर्ती चन्द्रगुप्त	॥=)	खूबसूरत बला	॥)
सम्राट अशोक	॥।)	जहरी साँप	।≡)
बीर बाला	॥)	दुश्मने ईमान	॥=)
सतीलीला	॥।)	गोरखधन्दा	॥)
शिव पार्वती	॥।)	भूल भुलइया	।-)
दुखिया भारत	॥)	शहीदेनाज	।≡)
बीर छत्रसाल	॥)	सफेद खून	।≡)
आँखों का गुनाह	॥।)	ठण्डीआग	॥)
ऊषा अनिरुद्ध	॥)	आतशीनाग	॥)
संगीत थियेटर	।-)	चिरागेचीन	॥)
रागिनी थियेटर	।-)	चलता पुर्जा	॥=)
बहार थियेटर	।=)	भारत दशा	।॥)
दूसरा भाग	॥=)	मशहूर गवैया	॥।)

नये छपे हुये सचित्र नाटक

ध्रुवलीला	॥।)	पहली भूल	(यंत्रस्थ)
परीक्षित	१)	घोर प्रायश्चित्त	,,
हिन्दू की गाय	॥)	मेरी आशा	॥।)
शाहीफरमान	॥)	दिनों का फेर	,,
सन्तान विक्रय	॥।)	नारी राज्य	,,
राधा माधव	॥।)	दुरंगी दुनिया	,,
कर्मवीर चंड	॥।)	परिवर्तन	,,
सतीसारन्धा वा		राम रहीम	,,
मातृ-भक्ति	॥)	भारत दशा	,,
झाँसी पतन	॥)	आँखों का अपराध	,,
हिन्दूललना	॥।)	जवानी का नशा	,,
पौरससिकंदर	॥।)	पंजाब केशरी	,,
बाल-रत्न-भोज	॥)	दिहाती महिला	,,
कन्या विक्रय	(यंत्रस्थ)	पृथ्वीपति	,,
छत्रपति शिवाजी		मीर कासिम	,,
पंजाब पतन	,,	एक प्याला	॥।)
मोरध्वज	,,	तू कौन	,,
नाक में दम	।)	मधुर मिलन	,,
औरंगजेब	(यंत्रस्थ)	सती पिंगला	,,

अहंकार	,,	नवयुवक	॥)
स्वार्थ की प्रतिमा	,,	अमरसिंह राठौर	,,

उपन्यास ग्रन्थमाला

की

सर्वोत्तम लोकप्रिय और शिक्षाप्रद पुस्तकें

जन्मभूमि दोनों भाग	१॥)	नवाबनन्दिनी	१॥)
पैशाचिक कांड	२)	दिल का काँटा	१)
सोने की राख	॥)	लाल चिट्ठी	१।)
नवाबी महल	१)	सुकुमारी	१।)
भ्रमर	१॥=)	हेमचन्द्र	१॥=)
मृणालिनी	१)	आरण्यबाला	१॥=)
विषवृक्ष	१।)	महेन्द्रमोहनी	१॥=)
राजदुलारी	१)	रामप्यारी	१।)
ज़हर का प्याला	१)	राजराजेश्वरी	१)
कनकलता	१)	भोजपुर की ठगी	॥=)
रजनी	॥)	रमणी रहस्य	॥)
बड़े घर की बड़ी बात	१)	प्रवासिनी	१॥)
रहस्यकुंड दोनों भाग	३।)	कंकन चोर	२)
प्रेत तर्पण	२)	सोने की कंठी	२।)

सीताराम	१।)	आँख के आँसू	॥=)
चन्द्रशेखर	१।)	तुर्क तरुणी	१)
सम्राट चंद्रगुप्त	२॥।)	आग की चिनगारी	॥।)
अल्लाहोअकबर	१॥)	सफेद औरत	१॥)
आँख का नशा	१।)	घर का नौकर (यंत्रस्थ)	
दौलत का नशा	१)	श्री (सीताराम उपसहार)	१)
उमा	१।)	अरुणमंदिर	,,
काँटों में फूल	(यंत्रस्थ)	प्रेम का प्याला	,,
ब्रह्महत्या	,,	मार्ग का पथिक (यंत्रस्थ)	

हिन्दी-रत्न-माला

के

सर्वोत्तम अनेक रंग-बिरंगे चित्रों सहित

रावण राज्य ३२ चित्र	२॥।)	सती सामर्थ्य	॥।)
वीरकर्ण कई चित्र	१।)	सती चिन्ता	॥।)
दर्पदलन ,,	॥।=)	सती सीता	१)
आदर्शदम्पति ,,	१)	सती महिमा	१।)
एकलव्य ,,	॥)	सती सुनीति	॥।)
वीर अभिमन्यु ,,	॥)	सती मदालसा	॥)
वीर लवकुश ,,	॥)	सती सावित्री	॥)

वीर रघु ,,	॥)	सती दमयन्ती	॥)
वीर वभ्रुवाहन ,,	॥)	सती शैव्या	॥=)
वीर बादल ,,	॥=)	सती द्रौपदी	॥=)
राजर्षि प्रहलाद ,,	॥)	सती पार्वती	॥)
वीरबालपंचरत्न ,,	२)	सती शकुन्तला	॥)
रमणी पंचरत्न ,,	२॥)	सती विपुला	॥=)
भारत सम्राट	१॥)	लक्ष्मी चरित्र	॥)
गृह लक्ष्मी	१।)	विदुषी गार्गी	॥)
गुण लक्ष्मी	।=)	विदुषीरत्ना	१॥)
लक्ष्मी बहू	।=)	पत्नी प्रभाव	॥।)
सास पतोहू	।=)	शर्मिष्ठा	॥।)
नारी हृदय	॥।)	सती शुकला	॥)
देवरानी जेठानी	॥)	सती लक्ष्मी	॥)
ननद भौजाई	॥)	राजलक्ष्मी	॥)
पतिव्रता गांधारी	॥।)	भाग्यलक्ष्मी	॥)

पता—उपन्यास-बहार-आफिस, काशी बनारस ।